खंड

1

संस्कृत पद्य-साहित्य का इतिहास

खंड परिचय

'संस्कृत पद्य-साहित्य' पाठ्यक्रम का यह प्रथम खंड है। इस खंड में 4 इकाइयाँ हैं। पाठ्यक्रम की ये सभी इकाइयाँ संस्कृत पद्य-साहित्य के इतिहास से सम्बद्ध हैं। इन इकाइयों में महाकाव्य की उत्पत्ति और विकास, खण्डकाव्य (गीतिकाव्य) और मुक्तक काव्य की उत्पत्ति और विकास के क्रम का विस्तृत विवेचन किया गया है। इसके साथ ही महाकाव्य, खण्डकाव्य और मुक्तक काव्य के लक्षण के आधार पर अपने ग्रन्थों का प्रणयन करने वाले महाकवियों जैसे कालिदास, अश्वघोष, भारवि, माघ, श्रीहर्ष तथा परवर्ती कवियों जैसे भर्तृहरि, जयदेव, अमरुक आदि के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व एवं शैलीगत वैशिष्ट्य से सम्बन्धित विभिन्न पक्षों का वर्णन किया गया है।

इस खंड की प्रत्येक इकाई में इकाई से सम्बन्धित कठिन शब्दावली दी गयी है जिनका अर्थ जानना आपके लिये नितान्त अपेक्षित है, इन शब्दों का अर्थ जानकर आप अपने भाषिक सामर्थ्य में वृद्धि कर सकते हैं। इकाइयों के अन्त में उपयोगी पुस्तकों की सूची दी गयी है। आप इन पुस्तकों का अध्ययन कर सम्बन्धित विषय की और अधिक जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

शुभकामनाओं के साथ

इकाई 1 महाकाव्य की उत्पत्ति और विकास

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप–

- कविता की प्रारम्भिक स्थिति को बता सकेंगे।
- रामायण और महाभारत के रचयिता का उल्लेख करते हुए इनके आकार-प्रकार को समझा पाएंगे।
- रामायण तथा महाभारत के अंगी रसों पर अपने शब्दों में लिख सकेंगे।
- पाणिनि तथा वररुचि की काव्य रचना का उल्लेख कर सकेंगे।
- कालिदास आदि सभी परवर्ती महाकाव्यकारों की विशेषताएं बता सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

भारत में महाकाव्य को सबसे पहले संस्कृत भाषा में देखा जाता है, इसका कारण यह है कि संस्कृत ही सबसे प्राचीन भाषा रही है इस भाषा में वेदों के पश्चात् सर्वप्रथम लिखा गया काव्य आदिकाव्य रामायण है। वस्तुतः कविता के बीज तो वेदों में भी मिलते हैं, किन्तु उनके काव्य ग्रन्थ में संकलित होने की स्थिति नहीं मिलती। उनके बाद रामायण, महाभारत और श्रीमद्भागवत जैसे ग्रन्थ कविता के महान् ग्रन्थ हैं । रामायण और महाभारत के बाद भारतीय कवियों को काव्य निर्माण की प्रेरणा इन्हीं दोनों महान् काव्यग्रन्थों से मिली है। जो पाश्चात्य पद्धति का एपिक है उससे रामायण और महाभारत की शैली तथा रचनाविधान में

पृथकता है। अतः हम भारतीय महाकाव्य के अध्ययन के लिए संस्कृत भाषा में लिखे गए वाल्मीकि रचित रामायण तथा व्यासरचित महाभारत के समीप सबसे पहले जाते हैं। इस अध्याय में आप मुख्य रूप से इस बात का अध्ययन करेंगे कि महाकाव्य का आरम्भ और उद्भव कब हुआ तथा इनके विकास की भारतीय साहित्य में क्या स्थिति रही है।

रामायण को आदिकाव्य कहा जाता है जिसका अंगीरस करुण है। महाभारत का अंगीरस शान्त रस है इनके बाद लिखे जाने वाले महाकाव्यों की संख्या व श्रृंखला लम्बी है। इनकी रचना करते समय बाद के सभी कवियों ने अपने-अपने महाकाव्यों की रचना के लिए इन्हीं से कथानक प्राप्त किए हैं, इन्हीं से नायक भी लिए हैं। वर्णन की कला भी इन्हीं से सीखी है। इस परम्परा में पाणिनि ,वररुचि से लेकर महाकवि कालिदास और भवभूति, माघ तथा अन्य सभी महाकवि आते हैं जिन्होंने पूर्व के दो काव्य ग्रन्थों यथा रामायण और महाभारत से विषय ग्रहण कर अपने-अपने काव्य ग्रन्थों की रचनाएं कीं ।

इसी कारण परम्परा से ही रामायण और महाभारत को उपजीव्य काव्य कहा गया तथा बाद के सभी महाकाव्यों को उपजीवी कहा गया। इस अध्याय में आप वेदों के पश्चात् कविता के उद्भव तथा उसके महाकाव्य तक पहुंचने तक की यात्रा का अध्ययन करेंगे। पूरी परम्परा को जानने के बाद आप आदिकाव्य रामायण से लेकर परवर्ती अन्य महाकाव्यकारों पर प्रकाश डाल सकेंगे ।

1.2 महाकाव्य का लक्षण

महाकाव्य का उद्भव या उसकी उत्पत्ति जानने से पहले यहाँ महाकाव्य का लक्षण जान लेना अथवा उसके स्वरूप और उसकी परिभाषा को जान लेना सबसे आवश्यक है। प्राचीन संस्कृत साहित्य में कहीं भी महाकाव्य का लक्षण उपलब्ध नहीं होता। लक्ष्य के आधार पर ही लक्षण की कल्पना की जाती है । वाल्मीकि रामायण तथा कालिदास के महाकाव्य का विश्लेषण करने वाले अथवा उनकी आलोचना करने वाले आलंकारिक आचार्यों ने ही अलंकार ग्रन्थों में महाकाव्य के लक्षणों पर विचार किए हैं। जिनमें काव्यादर्श के रचयिता आचार्य दण्डी तथा साहित्यदर्पण के रचयिता आचार्य विश्वनाथ आदि सबसे प्रामाणिक हैं। अग्निपुराण में भी लक्षण बताये गये हैं। साहित्यदर्पण नामक काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ के रचयिता आचार्य विश्वनाथ ने महाकाव्य का लक्षण करते हुए कहा है–

सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायकः सुरः।
सद्वंशः क्षत्रियो वापि धीरोदात्तगुणान्वितः।।
एकवंशभवा भूपाः कुलजा बहवोऽपि वा।
शृङ्गारवीरशान्तानामेकोऽङ्गी रस इष्यते।।
अंगानि सर्वेऽपि रसाः सर्वे नाटकसंधयः।
इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद् वा सज्जनाश्रयम्।।
चत्वारस्तस्य वर्गाः स्युस्तेष्वेकं च फलं भवेत्।
आदौ नमस्क्रियाशीर्वा वस्तुनिर्देश एव वा।।
क्वचिन्निन्दा खलादीनां सतां च गुणकीर्तनम्।
एकवृत्तमयैः पद्यैरवसानेऽन्यवृत्तकैः।।
नातिस्वल्पा नातिदीर्घाः सर्गा अष्टाधिका इह।
नानावृत्तमयः क्वापि सर्गः कश्चन् दृश्यते।।
सर्गान्ते भाविसर्गस्य कथायाः सूचनं भवेत्।
सन्ध्यासूर्येन्दु रजनीप्रदोषध्वान्तवासराः।।

प्रातर्मध्याह्नमृगया शैलर्तुवनसागराः।
सम्भोगविप्रलम्भौ च मुनिस्वर्गपुराध्वराः।।
रणप्रयाणोपयममन्त्रपुत्रोदयादयः।
वर्णनीया यथायोगं सांगोपांगा अमी इह।।
कवेर्वृत्तस्य वा नाम्ना नायकस्येतरस्य वा।
नामस्य सर्गोपादेयकथया सर्गनाम तु।।

श्लोकों का अर्थ है– 'सर्गबन्ध कविता को महाकाव्य कहते हैं, इसका नायक कोई देवता अथवा कुलीन क्षत्रिय होता है, जो धीर और उदात्त गुणों से समन्वित होता है। श्रृंगार, वीर और शान्त में से कोई एक रस प्रधान हो। अन्य सभी रसों को अप्रधान माना जाय। महाकाव्य में नाटक की सभी सन्धियाँ भी समाहित होनी चाहिए। महाकाव्य का कथानक ऐतिहासिक तथा लोकप्रसिद्ध होना चाहिए। जिसमें धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष आदि पुरुषार्थों में से किसी एक का फल भी होना चाहिए। महाकाव्य के लेखन का प्रारम्भ ईश्वर, गुरू आदि के नमस्कार अथवा आशीर्वाद से होना चाहिए। कहीं-कहीं दुष्टों की निन्दा और सज्जनों की प्रशंसा का वर्णन अवश्य होना चाहिए। पूरे महाकाव्य में एक ही छन्द होना चाहिए किन्तु अन्त में छन्द परिवर्तन होना चाहिए। प्रत्येक सर्ग के अन्त में आगे की कथा का सन्देश दिया जाना चाहिए। महाकाव्य का सम्पूर्ण वर्णन सन्ध्या, सूर्य, चन्द्र, रात्रि, प्रदोष, अन्धकार, दिन, प्रातः, मध्यान्ह, मृगया, पर्वत, ऋतु, वन, सागर, सम्भोग और विप्रलम्भ श्रृंगार, मुनि, स्वर्ग, नगर, यज्ञ, रण, यात्रा, विवाह, पुत्र आदि से सम्पन्न होना चाहिए। महाकाव्य का नामकरण कवि के जीवन अथवा नायक के चरित्र पर किया जाना चाहिए सर्ग के अन्त में आने वाली कथा के आधार पर भी महाकाव्य का नामकरण करना चाहिए अथवा सर्गों का नाम रखना चाहिए।

ऊपर कहे गए लक्षणों का पालन करने वाली कविताएं अथवा काव्य संकलन ही महाकाव्य कहे जाते हैं। इन लक्षणों को पढ़कर आप स्वयं जान गए होंगे कि वेदों में इस प्रकार की स्थिति नहीं थी। रामायण तथा महाभारत ललित कविता के विशाल ग्रन्थ हैं। किन्तु बाद में काव्यशास्त्रीय आचार्यों ने अपने नियमों के आधार पर महाकाव्यत्व का अध्ययन किया। अब नीचे के वर्णनों में आप महाकाव्य की उत्पत्ति तथा इनके क्रमिक विकास का अध्ययन करेंगे जिसके अन्तर्गत आपको सबसे पहले रामायण और महाभारत का संक्षिप्त परिचय जान लेना चाहिए। इसी से कालिदास आदि कवियों के महाकाव्यों को जानने में आसानी होगी ।

1.3 महाकाव्य का उद्भव

काव्य जैसा उद्भव सबसे पहले ऋग्वेद के आख्यान सूक्तों इन्द्र, वरुण, विष्णु, उषा आदि देवताओं की स्तुति में किए गए मन्त्रों तथा नाराशंसी गाथाओं से हुआ है। इन वैदिक आख्यानों का विस्तृत रूप ब्राह्मण ग्रन्थों में मिलता है। यही स्वरूप आगे चलकर महाकाव्य का रूप ले लेता है। जूनागढ़ के एक अभिलेख में रुद्रदामन की परिष्कृत रचना मिलती है हरिषेण की प्रयाग प्रशस्ति भी समुद्रगुप्त के काल का प्रमाण है। प्राचीन राजाओं के शिलालेखों का साहित्य उस समय के काव्य साहित्य की सत्ता का सबसे सबल प्रमाण है।

वैदिक संहिताओं में भी लालित्य के साथ अलंकार के प्रयोग मिलते हैं। जिनका प्रयोग धार्मिक उत्सवों में किया जाता रहा होगा। वे गीत, नृत्य, आख्यान, उपाख्यान पारम्परिक रूप से चले आ रहे थे। आख्यान गीत ही ऋग्वेद के संवाद सूक्त हैं जैसे – यम-यमी संवाद 10/10, पुरुरवा उर्वशी संवाद 10/95, अगस्त लोपामुद्रा संवाद1/179, इन्द्र

अदिति संवाद 4/18, इन्द्र इन्द्राणी संवाद10/86, सरमा पणि संवाद 10/108, इन्द्र मरुत संवाद1/165/170, इन संवाद सूक्तों को भाष्यकार यास्क ने आख्यान ही कहा है। श्रीमद्भागवत महापुराण में वेणु गीत, भ्रमरगीत ,गोपी गीत आदि काव्यत्व की ही सूचना देते हैं। जिनके प्रसंगों के आधार पर कालान्तर में अधिसंख्य महाकाव्य रचे गए। इस शृंखला में रामायण और महाभारत को काव्य की प्रौढ परम्परा का संवाहक कहा जा सकता है क्योंकि इन दोनों महाकाव्यों में भी जिन आख्यानों और उपाख्यानों के रूप मिलते हैं वे सभी संस्कृत के महाकाव्यों के उद्भव रूप ही हैं। इसी परम्परा में बाद के अलंकारिक आचार्यों द्वारा रचे गए महाकाव्य के लक्षण के आधार पर हम रामायण और महाभारत को महाकाव्यत्व की संज्ञा से विभूषित करते हैं। इन्हें उपजीव्य और इनके बाद वालों को उपजीवी कहा जाता है। अतः इस क्रम में आपको सबसे पहले रामायण तथा महाभारत का संक्षिप्त परिचय जान लेना चाहिए जिससे महाकाव्यत्व जानने में तथा महाकाव्य का विकास जानने में आपको आसानी होगी ।

1.3.1 रामायण और उसकी विषय-वस्तु

रामायण की रचना का समय 800 अथवा 600 ई0 पू0 निर्धारित किया गया है। रामायण की रचना के विषय में एक कथा प्रसिद्ध है–

महर्षि वाल्मीकि ने व्याध के द्वारा मारे गए क्रौंच मिथुन में से नर के मर जाने पर मादा के द्वारा करुणापूर्ण विलाप किये जाने की स्थिति को देखा। इस करुणापूर्ण स्थिति को सहन न कर पाने के कारण वाल्मीकि के हृदय से उनकी करुणा स्वयं श्लोक के रूप में निकल पड़ी–

मा निषादप्रतिष्ठां त्वमगमःशाश्वती समाः
यत् क्रौंच मिथुनादेकमवधीःकाम मोहितम् ।

अर्थात् हे निषाद क्रौंच पक्षी के काममोहित जोड़े में से नर को मार कर तुम कभी प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं करोगे। यह सुनकर ब्रह्मा स्वयं अवतरित हुए और उन्होंने महर्षि को रामचरित की रचना करने की प्रेरणा दी। इसी प्रेरणा पर आधारित लौकिक संस्कृत भाषा में लिखी गई रामायण है। इसकी पुष्टि आनन्दवर्द्धन ने अपने ग्रन्थ ध्वन्यालोक में भी की है

काव्यस्यात्मा स एवार्थस्तथा चादिकवेःपुरा
क्रौंचद्वन्द्ववियोगोत्थः शोकः श्लोकत्वमागतः ।।

(ध्वन्यालोक – 1/5)

इस प्रकार वाल्मीकि आदिकवि हैं और रामायण आदिकाव्य है। वर्तमान में रामायण में 24000 श्लोक प्राप्त होते हैं। रामायण में सात काण्ड हैं– बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड, सुन्दरकाण्ड, युद्धकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड। विद्वानों का मानना है कि रामायण शैली बालकाण्ड और उत्तरकाण्ड से पृथक् है। अतः इन काण्डों को मूल रामायण से अलग माना जाना चाहिए। वस्तुतः रामायण में प्रक्षेप बहुत है अतः इसके मूल रूप का निर्धारण करना कठिन कार्य है। फिर भी उपलब्ध तथ्यों के आधार पर रामायण की काव्यता प्रतिष्ठित है। रामायण का अंगी रस करुण है। इसमें मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के आदर्श राजा होने के साथ-साथ प्राणी मात्र की रक्षा, यज्ञ रक्षा और रावण विजय का वर्णन युद्ध के रूप में प्राप्त होता है। विशेष ध्यातव्य है रामायण में वाल्मीकि ने प्रकृति के भी कम मनोहर वर्णन नहीं किए हैं। लक्षणकारों द्वारा की गई महाकाव्य की परिभाषा में पूरे लक्षण रामायण में घटित होते हैं, अतः रामायण महाकाव्य है।

1.3.2 महाभारत और उसकी विषय-वस्तु

महाभारत की रचना पराशर के पुत्र वेदव्यास ने की है इन्हीं को पुराणों का भी रचयिता माना जाता है।वर्तमान में महाभारत में 100000 श्लोक पाए जाते हैं। इसे शतसाहस्त्रीसंहिता भी कहा गया है। महाभारत की रचना 1 दिन या 1 वर्ष में नहीं हुई है। गुप्त काल के शिलालेखों से पता चलता है कि उस समय तक महाभारत की रचना पूर्ण हो चुकी थी क्योंकि उन शिलालेखों में शतसाहस्त्रीसंहिता शब्द का प्रयोग मिलता है। महाभारत एक ऐसा ग्रन्थ है जिसके कथानक में अनेक नायकों की उत्पत्ति होती है। विद्वानों द्वारा महाभारत की रचना के तीन स्वरूप बताए गए हैं–

1. जय

2. भारत

3. महाभारत

व्यास ने स्वयं लिखा है –**जयनामेतिहासोयम्**। प्रारम्भ में महाभारत जय नाम से था, जिसमें मैकडॉनल के अनुसार 8800 श्लोक थे। व्यास ने इसे अपने शिष्य वैशम्पायन को सुनाया था जनमेजय के सर्पयज्ञ करते समय वैशम्पायन ने इसका पाठ उन्हें सुनाया । इन दोनों के संवादों के कारण इस ग्रन्थ में संवर्धन हुआ तब इसका नाम भारत पड़ा। इस स्थिति में 24000 श्लोक हुए । महाभारत की तृतीय अवस्था में लोमहर्षण के पुत्र सौति ने शौनक को सुनाया। सभी का मानना है कि सौति के द्वारा ही महाभारत का पूर्ण संवर्धन होकर एक लाख श्लोकों का आकार दिया गया।

महाभारत में कौरव तथा पाण्डवों की कथा वर्णित है, इसमें 18 पर्व हैं–

आदिपर्व ,सभापर्व, वनपर्व, विराटपर्व, उद्योगपर्व, भीष्मपर्व ,द्रोणपर्व, कर्णपर्व, शल्यपर्व, सौप्तिकपर्व, स्त्रीपर्व, शान्ति पर्व, अनुशासनपर्व, आश्वमेधपर्व , आश्रमवासीपर्व, मौसलपर्व, महाप्रस्थानिकपर्व, स्वर्गारोहणपर्व। सभी पर्वों में कौरव तथा पाण्डवों की पूर्ण कथा के साथ-साथ महाकाव्य के लक्षणों पर घटित होने वाले सभी प्रकार के वर्णन पाए जाते हैं। महाभारत में कुल छः उपाख्यान पाए जाते हैं। शकुन्तलोपाख्यान आदिपर्व में है बाकी पाँच मत्स्योपाख्यान, रामोपाख्यान, शिवि उपाख्यान, सावित्री उपाख्यान ,नलोपाख्यान सभी वन पर्व में हैं।

महाभारत धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की वर्णन सामग्रियों से भरा हुआ एक विशालकाय ग्रन्थ है। इसी के आख्यानों से कथा ग्रहण करके बाद के कवियों ने बड़े-बड़े महाकाव्यों की रचनाएं की हैं। यह अलग बात है कि महाकाव्य की परिभाषाएं बाद में लिखी गईं जिनके आधार पर रामायण और महाभारत के समालोचक इन दोनों ग्रन्थों को महाकाव्य मानते हैं। महाभारत में एक महाकाव्य की कसौटी के लिए सभी श्रेष्ठ वर्णन उपलब्ध होते हैं।

बोध प्रश्न 1

1. **निम्नलिखित प्रश्नों में सही अथवा गलत का चयन कीजिये।**

   (i) साहित्यदर्पण दण्डी की रचना है – सही/गलत

   (ii) महाकाव्य को सर्गबन्ध होना चाहिए – सही/गलत

   (iii) महाकाव्य में सर्गों की संख्या 8 से कम नहीं होनी चाहिए – सही/गलत

   (iv) प्रयाग प्रशस्ति रुद्रदामन की है – सही/गलत

(v) जूनागढ़ का अभिलेख हरिषेण का है – सही/गलत

(vi) काव्यादर्श विश्वनाथ की रचना है – सही/गलत

2. रामायण किसकी रचना है?

....

....

....

3. जिस पक्षी को वाल्मीकि ने देखा उसका नाम क्या है ?

....

....

....

4. क्रौंच नर को किसने मारा था ?

....

....

....

5. वाल्मीकि को रामचरित की रचना की प्रेरणा किससे प्राप्त हुई ?

....

....

....

6. महाभारत में कितने श्लोक हैं ?

....

....

....

7. महाभारत को कौन सी संहिता कहा जाता है ?

....

....

....

अभ्यास प्रश्न 1

1. महाकाव्य का स्वरूप कैसा होना चाहिये ?
2. महाभारत में कितने पर्व हैं? उनके नाम लिखिये।

1.4 महाकाव्य का विकास

रामायण और महाभारत के पश्चात् व्याकरणशास्त्र के प्रणेता पाणिनि रचित पातालविजय नामक महाकाव्य का नाम मिलता है, जिसका समय 450 ईसा पूर्व है। इसी क्रम में संस्कृत

व्याकरण के वार्तिककार आचार्य वररुचि 350 ईसा पूर्व द्वारा रचित स्वर्गारोहण नामक महाकाव्य उपलब्ध होता है । पाणिनि की अष्टाध्यायी पर भाष्य लिखने वाले महाभाष्यकार पतंजलि द्वारा महानन्द नामक काव्य की रचना की गई। तत्कालीन शिलालेखों में अलंकृत काव्य शैली की रचनाओं से काव्य कला का विकास परिलक्षित होता है। महाकवि कालिदास ने अपनी रचनाएं कब कीं, इसका सटीक वर्णन करना कठिन है, किन्तु अनेक विद्वानों का यह मत है कि कालिदास गुप्तकालीन थे। इनके द्वारा दो महाकाव्य रचे गये – रघुवंश महाकाव्य, कुमारसम्भव महाकाव्य।

लौकिक संस्कृत भाषा में कविता लिखने का उदय तो वाल्मीकि से ही हुआ है । किन्तु कालिदास की गणना संस्कृत महाकाव्य के विकास में उत्कर्ष के रूप में की जाती है । महाकवि कालिदास के बाद विकास क्रम में अश्वघोष ,मातृचेट ,आर्यशूर, भारवि, भट्टि, कुमारदास, मंखक, जयदेव आदि कवियों के नाम आते हैं, जिन्होंने अधिकतर महाकाव्यों की रचनाएं की हैं। महाकाव्य की परम्परा के अपकर्ष काल में अभिनन्द, अमरचन्द सूरि, कश्मीरी कवि मातृगुप्त, रत्नाकर, क्षेमेन्द्र, श्रीहर्ष, वस्तुपाल आदि से लेकर सभी जैन, बौद्ध तथा अन्य प्राकृत भाषा के महाकाव्यों के नाम आते हैं। यद्यपि श्रीहर्ष का नैषधीयचरित विद्वानों की दवा कहा जाता है फिर भी अलंकारिक नियमों की दृष्टि से उतना लालित्य न होने के कारण आचार्य बलदेव उपाध्याय ने इस काव्य को अपकर्ष काल का ही काव्य माना है।

1.4.1 कालिदास और उनकी कृतियाँ

महाकाव्य के सूत्रबद्ध लक्षण जो हमें प्राप्त होते हैं उनके आधार पर महाकाव्य की दृष्टि से परिमार्जित रूप में कालिदास के महाकाव्य हमें प्राप्त होते हैं अर्थात् महाकाव्य का विकास क्रम निर्धारित तो नहीं है किन्तु रामायण और महाभारत के पश्चात् लक्षणों के आधार पर परीक्षा करने के बाद कालिदास के ही महाकाव्य सबसे पहले विकसित रूप में प्राप्त हुए हैं ऐसा सभी का मानना है।

वस्तुतः संस्कृत साहित्य में कालिदास की अनेक कृतियाँ प्रसिद्ध हैं। किन्तु विद्वानों द्वारा माननीय केवल सात ही ग्रन्थ हैं–

1. रघुवंश महाकाव्य
2. कुमारसम्भव महाकाव्य
3. ऋतुसंहार (लघुकाव्य)
4. मेघदूत खण्डकाव्य

तीन नाटक–

अभिज्ञानशाकुन्तलम् ,मालविकाग्निमित्रम् तथा विक्रमोर्वशीयम्

कालिदास वैदर्भी रीति के कवि हैं। यह उपमा के लिए प्रसिद्ध हैं। पुराने कवियों की गणना करते समय इनकी गणना कनिष्ठिका उंगली पर की जाती है। यहां संक्षेप में दो महाकाव्यों के परिचय आप जानेंगे–

रघुवंश महाकाव्य

सभी साहित्यशास्त्रियों ने रघुवंश को श्रेष्ठ महाकाव्य माना है। इसमें कुल 19 सर्ग हैं। प्रारम्भ के नौ सर्गों में दिलीप, रघु, अज और दशरथ का वर्णन प्राप्त है। 10 से 15 तक कुल

5 सर्गों में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के आदर्श जीवन का उदात्त वर्णन है। शेष सर्गों में राम के पश्चात् अग्निवर्ण तक के अन्य वंशजों का वर्णन किया गया है। इस महाकाव्य में लक्षण के अनुसार किसी एक राजा को नायक नहीं चुना गया है तथापि एक ही महाकाव्य में अनेक राजाओं के वर्णन का सर्वाधिक कठिन कार्य कालिदास ने किया है। ऐसा होने से भी महाकाव्यता में कोई कमी नहीं दिखती। राज्याभिषेक, विवाह, स्वयंवर, युद्ध, राज्य, शासन आदि के वर्णन बहुत ही रमणीय शैली में किए गए हैं। कालिदास की समस्त काव्य कला रघुवंश में ही दिखाई देती है। दिलीप की गौ सेवा, कौत्स और रघु का उदार व्यवहार, इन्दुमती स्वयंवर आदि प्रसंग रघुवंश महाकाव्य की अप्रतिम विशेषताएं हैं ।

कुमारसम्भव महाकाव्य

इस महाकाव्य में कालिदास ने शिव पार्वती के साथ-साथ उनके पुत्र कार्तिकेय के जन्म का भी वर्णन किया है। पर्वतराज हिमालय की सुषमा के वर्णन से ही महाकाव्य का प्रारम्भ है। इसमें कुल 18 सर्ग हैं, किन्तु विद्वानों द्वारा स्वीकृत सर्गों की संख्या 17 है । इस महाकाव्य के लिए समालोचकों और विद्वानों में मतैक्य नहीं है। सभी का मानना है कि इसके सात ही सर्गों की रचना कालिदास द्वारा की गई है। प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथ ने कुमारसम्भव के 8 सर्गों पर टीका लिखी है। फिर भी वर्णन चातुरी की दृष्टि से तथा लक्षण परीक्षा करने पर सभी प्रकार से कुमारसम्भव का महाकाव्यत्व सिद्ध होता है। महाकाव्यों के इस विकास क्रम में कालिदास के पश्चात् अश्वघोष का नाम लिया जाता है। नीचे के वर्णनों में आप अश्वघोष की महाकाव्य रचना का परिचय प्राप्त करेंगे।

1.4.2 अश्वघोष और उनके महाकाव्य

इनके द्वारा रचित महाकाव्य सौन्दरनन्द की पुष्पिका में लिखा है कि यह साकेत के निवासी थे। इनकी माता का नाम सुवर्णाक्षी था। अश्वघोष को बौद्ध धर्माचार्य और ब्राह्मण कुल में उत्पन्न स्वीकार किया जाता है। इनके समय निर्धारण में कठिनाइयां आती हैं। फिर भी कनिष्क के काल के आधार पर इनका समय प्रथम शती ई0 ही सिद्ध होता है। अश्वघोष की रचनाएं इस प्रकार हैं–

बुद्धचरित महाकाव्य, सौन्दरनन्द महाकाव्य, शारिपुत्रप्रकरण। इसके अलावा वज्रसूची, गण्डीस्तोत्र, सूत्रालंकार, कल्पनामण्डितिका तथा महायानश्रद्धोत्पालदक शास्त्र भी इन्हीं की कृतियां मानी जाती हैं। महाकाव्य की दृष्टि से अश्वघोष की दो रचनाओं का परिचय अधोलिखित है –

बुद्धचरित महाकाव्य

यह अश्वघोष रचित महाकाव्य है इसमें कुल 28 सर्ग हैं किन्तु संस्कृत भाषा में इसके 2 से लेकर 13 सर्ग ही प्राप्त हैं। चीनी तथा तिब्बती भाषाओं में इसका अनुवाद भी हुआ है। संस्कृत भाषा में यह महाकाव्य अधूरा तो है किन्तु प्राप्त सर्गों के आधार पर अश्वघोष के महाकाव्य की रचना कला का अध्ययन किया जाता है। प्रथम और 14 दोनों सर्गों की प्रतियाँ अपूर्ण मिलती हैं। इस महाकाव्य में भगवान् बुद्ध की गर्भावस्था से लेकर प्रथम संगीति तक की कथा निबद्ध की गई है। बुद्ध का जन्म, महाभिनिष्क्रमण, तपोवन गमन, विलाप आदि सभी चित्रण बुद्धचरित महाकाव्य में है। अश्वघोष की भाषा कालिदास के जैसी मार्मिक तो नहीं है किन्तु इनकी भी शैली वैदर्भी है। इन्होंने बुद्धचरित में महाकाव्य की परम्परा का निर्वाह किया है। अपनी काव्य शैली के द्वारा पाठकों को नीरस उपदेशों की ओर आकृष्ट करना चाहते थे। सूर्योदय, चन्द्रोदय, प्रसन्नता, पुष्पवृष्टि, दिवा, रात्रि सभी

वर्णनों को प्रस्तुत करने में अश्वघोष निपुण हैं। बुद्धचरित की रचना में उनकी शैली महाकाव्य के लक्षणों पर खरी उतरने के लिए कम प्रतीत नहीं होती ।

सौन्दरनन्द महाकाव्य

सौन्दरनन्द में १८ सर्ग हैं। यह काव्य सिद्धार्थ के भ्राता नन्द को कामुकता से हटाकर संघ में दीक्षित होने का भव्य वर्णन करता है। काव्यदृष्टि से बुद्धचरित की अपेक्षा यह कहीं अधिक स्निग्ध तथा सुन्दर है। यह भी अश्वघोष द्वारा रचित है। बुद्ध के सौतेले भाई नन्द के धर्म परिवर्तन का उपाख्यान ही इस ग्रन्थ का विषय है। लौकिक तथा पारलौकिक दोनों विषयों के महत्त्व और संघर्ष की मनोरम विवेचना इस महाकाव्य में प्राप्त होती है। नन्द अपनी प्रियतमा पत्नी सुन्दरी के प्रेम में निमग्न है, उसे प्रिया के अतिरिक्त संसार में कोई भी वस्तु आकृष्ट करने में सफल नहीं होती है। इस प्रकार इस महाकाव्य में ऐहिक भोग विलास को देखकर भाई के जीवन नष्ट हो जाने के भय से तथागत बुद्ध ने नन्द को प्रव्रज्यान ग्रहण करने का परामर्श दिया है। एक ओर सुन्दरी का दिव्य रूप उसे आकृष्ट करता है और दूसरी ओर तथागत के उपदेश उसे व्यग्र करते हैं। नन्द की इस अद्भुत मनोदशा का वर्णन कवि अश्वघोष ने इस महाकाव्य में अपनी प्रतिभा के बल पर मनोरम शैली में उपस्थित किया है। उपदेशों को प्राप्त कर अन्ततः नन्द प्रव्रज्या ग्रहण करते हैं। शैली और वर्णन चातुरी की दृष्टि से अश्वघोष का यह महाकाव्य बुद्धचरित से उत्कृष्ट है। महाकाव्य की दृष्टि से यह काव्य ग्रन्थ उत्कृष्ट है।

1.4.3 भारवि और उनका महाकाव्य

सभी प्रमुख कवियों की भाँति भारवि के जीवन निर्धारण में भी अत्यन्त सफल प्रमाण नहीं मिलते। अवन्तिसुन्दरीकथा के एक पद के आधार पर इन्हें दण्डी का पितामह कहा जाता है किन्तु उसे उचित नहीं माना गया। ऐहोल के शिलालेख में भारवि का नाम आता है। इसके आधार पर भारवि दक्षिण भारतीय सिद्ध होते हैं। भारवि चालुक्य नरेश विष्णुवर्धन के सभापण्डित थे। काशिका वृत्ति में भारवि का उद्धरण मिलता है। राजशेखर ने भी उज्जयिनी में काव्य परीक्षा देने वाले कवियों में भारवि का नाम लिया है। बाहरी साक्ष्यों के आधार पर यह स्वीकार किया जाता है कि भारवि छठीं शताब्दी ईस्वी में रहे होंगे। सभी प्रमाणों की समीक्षा के आधार पर इनका समय छठीं सदी के उत्तरार्ध तथा सातवीं ई0 के पूर्वार्ध में माना जाता है। इनके महाकाव्य का नाम किरातार्जुनीयम् है–

किरातार्जुनीयम् महाकाव्य

इसका कथानक भारवि ने महाभारत से लिया है। इस महाकाव्य में 18 सर्ग हैं। निर्वासन के बाद पाण्डव द्वैतवन में रहते हैं वहीं से युधिष्ठिर ने वनेचर को गुप्तचर बनाकर दुर्योधन के राज्य शासन का समाचार लाने के लिए भेजा है। वनेचर द्वारा दुर्योधन के व्यवस्थित शासन का समाचार बताने पर द्रौपदी और भीम युधिष्ठिर को युद्ध करने का परामर्श देते हैं। इसी समय वेदव्यास आकर अर्जुन को इन्द्रकील पर्वत पर तपस्या करने का परामर्श देते हैं। अर्जुन की घोर तपस्या के बाद प्रसन्न होकर भगवान् शिव किरात का वेश धारण कर उनकी परीक्षा लेने के लिए वहां आते हैं और प्रसन्न होकर अर्जुन को पाशुपतास्त्र प्रदान करते हैं। महाकाव्य के लक्षणों के अनुसार जल, नदी, पर्वत ,सूर्योदय, सूर्यास्त ,विहार आदि सभी अंगों का वर्णन इस महाकाव्य में किया गया है। इसका अंगी रस वीर है। अर्थगौरव की दृष्टि से इस महाकाव्य के लिए भारवि बहुत प्रतिष्ठित कवि हैं। इस महाकाव्य में शासन व्यवस्था से लेकर महाकाव्य के सभी अंगों में अपनी वर्णन कला के द्वारा भारवि ने किरातार्जुनीयम् के महाकाव्यत्व को सिद्ध किया है।

बोध प्रश्न 2

1. **नीचे लिखे प्रश्नों में सही/गलत का निर्धारण कीजिए।**

   i) संस्कृत व्याकरण के वार्तिककार पतंजलि हैं – सही/गलत

   ii) पाणिनी की अष्टाध्यायी के भाष्यकार वररुचि हैं – सही/गलत

   iii) स्वर्गारोहण महाकाव्य के रचयिता पाणिनि हैं – सही/गलत

   iv) कालिदास के काव्य विद्वानों की दवा कहे जाते हैं – सही/गलत

   v) महानन्द काव्य पतंजलि की रचना है – सही/गलत

   vi) किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में 25 सर्ग हैं – सही/गलत

2. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये।**

   i) पाणिनि ने .... नामक महाकाव्य की रचना की।

   ii) कालिदास .... रीति के कवि हैं।

   iii) बुद्धचरित महाकाव्य में .... सर्ग हैं।

   iv) किरातार्जुनीय महाकाव्य का अंगीरस .... है।

   v) .... के शिलालेख में भारवि का नाम मिलता है।

   vi) स्वर्गारोहण महाकाव्य के प्रणेता .... हैं।

अभ्यास प्रश्न 2

1. कालिदास की कितनी रचनायें हैं ? उनके नाम लिखिये।
2. भारवि के महाकाव्य का संक्षेप में परिचय लिखिये।

1.4.4 अन्य प्रमुख महाकाव्य

संस्कृत महाकाव्य की विकास परम्परा में कालिदास आदि के बाद संस्कृत साहित्य के इतिहास में अनेक महाकवियों ने महाकाव्यों का प्रणयन किया उनमें से कुछ प्रमुख महाकाव्यों का परिचय यहाँ दिया जा रहा है–

रावणवध महाकाव्य

भट्टिकाव्य महाकवि भट्टि द्वारा रचित महाकाव्य है। इसका वास्तविक नाम 'रावणवध' है। इसमें भगवान् रामचन्द्र की कथा जन्म से लेकर रावण के संहार तक वर्णित है। भट्टिकाव्य की रचना गुर्जर देश के अन्तर्गत वलभी नगर में हुई।

महाकवि भट्टि का समय ईसवी छठीं शताब्दी का उत्तरार्ध सर्वसम्मत है। इस महाकाव्य का उपजीव्य ग्रन्थ वाल्मीकि रामायण है।इस महाकाव्य में चार काण्ड हैं। यह महाकाव्य 22 सर्गों में विभाजित है तथा महाकाव्य के सभी लक्षणों से समन्वित है।

1. प्रकीर्णकाण्ड
2. अधिकारकाण्ड
3. प्रसन्नकाण्ड
4. तिङन्तकाण्ड

इन चार काण्डों में कथावस्तु के विभाजन की दृष्टि से प्रथम काण्ड में पाँच सर्ग हैं जिनमें क्रमशः रामजन्म, सीताविवाह, राम का वनगमन एवं सीताहरण तथा राम के द्वारा सीतान्वेषण का उपक्रम वर्णित है। द्वितीय काण्ड में चार सर्ग हैं। जिसमें सुग्रीव का राज्याभिषेक, वानर भटों द्वारा सीता की खोज, लौट आने पर अशोकवाटिका को भंग करना और मारुति को पकड़कर सभा में उपस्थित किए जाने की कथावस्तु आदि का वर्णन है। प्रसन्नकाण्ड में अगले चार सर्ग हैं जिनमें सीता के अभिज्ञान का प्रदर्शन है, लंका में प्रभात का वर्णन, विभीषण का राम के पास आना तथा सेतुबन्ध की कथा का वर्णन है। अन्तिम, तिङन्तकाण्ड नौ सर्गों में है जिनमें शरबन्ध से लेकर राजा रामचन्द्र के अयोध्या लौट आने तक की कथा लिखी है। चारों काण्ड और 22 सर्गों में 1625 पद्य हैं। अधिकांश प्रयोग अनुष्टुप् श्लोकों का है। दसवें सर्ग में विविध छन्दों का प्रयोग किया गया है जिनमें पुष्पिताग्रा प्रमुख है। इनके अतिरिक्त प्रहर्षिणी, मालिनी, औपच्छन्दसिक, वंशस्थ, वैतालीय, अश्वललित, नन्दन, पृथ्वी, रुचिरा, तनुमध्या, त्रोटक, द्रुतविलम्बित, प्रमिताक्षरा, प्रहरणकलिका, मन्दाक्रान्ता, शार्दूलविक्रीडित एवं स्रग्धरा का प्रयोग दिखाई देता है। साहित्य की दृष्टि से भट्टिकाव्य में प्रधानतः ओजगुण एवं गौडी रीति है, तथापि अन्य माधुर्यादि गुणों के एवं वैदर्भी तथा लाटी रीति के वर्णन भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होते हैं।

जानकीहरण महाकाव्य

कुमारदास रचित महाकाव्य का नाम जानकीहरण है यह सिंहली भाषा के कवि हैं इस महाकाव्य के 15 सर्ग ही व्याख्या सहित प्राप्त होते हैं। प्रमाणों के आधार पर इनका समय 8 वीं सदी का उत्तरार्ध सिद्ध किया जाता है। इसकी कथावस्तु रामायण पर ही आधारित है इस काव्य को महाकाव्य के सांचे में ढालने का पूरा प्रयास किया गया है। इसमें राजा दशरथ की जलकेलि, राम और सीता की श्रृंगारिक बातें, वर्षा वर्णन ,सुग्रीव को दी गई लक्ष्मण की झिड़कियाँ तथा राक्षसों की कमनीय केलि का वर्णन महाकाव्यता स्थापित करने के लिए किया गया है। यह महाकाव्य शैली की दृष्टि से कालिदास से प्रभावित दिखाई पड़ता है ।

शिशुपालवध महाकाव्य

संस्कृत कवि माघ मारवाड़ के प्राचीनतम महाकाव्य 'शिशुपालवध' के रचयिता थे । 'माघ' का जन्म भीनमाल के एक प्रतिष्ठित धनी ब्राह्मण-कुल में हुआ था। उनकी पत्नी का नाम विद्यावती था। २० सर्गों तथा १८०० अलंकारिक छन्दों में रचित यह ग्रन्थ संस्कृत के छः महाकाव्यों में गिना जाता है । इसमें कृष्ण द्वारा शिशुपाल के वध की कथा का वर्णन है। इस महाकाव्य में महाकाव्य होने के सभी गुण विराजमान हैं । जिस प्रकार कालिदास उपमा के लिए प्रसिद्ध हैं, भारवि अपने अर्थगौरव के लिए प्रसिद्ध हैं तथा श्रीहर्ष पदलालित्य के लिए प्रसिद्ध हैं, उसी प्रकार इन तीनों के समन्वित रूप को माघ के लिए माघे सन्ति त्रयो गुणाः कहकर विभूषित किया जाता है। अतः माघ में उपमा, अर्थगौरव और पदलालित्य तीनों पाए जाते हैं ।

दशावतारचरित महाकाव्य

क्षेमेन्द्र का जन्म लगभग 1025-1066 के आस-पास माना गया है। ये संस्कृत के प्रतिभासम्पन्न कश्मीरी महाकवि थे। ये विद्वान् ब्राह्मणकुल में उत्पन्न हुए थे। इन्होंने प्रसिद्ध आलोचक तथा तन्त्रशास्त्र के मर्मज्ञ विद्वान् अभिनवगुप्त से साहित्यशास्त्र का अध्ययन किया था। दशावतारचरित इनका उदात्त महाकाव्य है जिसमें भगवान् विष्णु के दसों अवतारों का बड़ा ही रमणीय तथा प्रांजल, सरस एवं काव्यात्मक वर्णन किया गया है।

श्रीकण्ठचरित महाकाव्य

संस्कृत साहित्य के बृहद् इतिहास में क्षेमेन्द्र के पश्चात् मंखक का नाम लिया जाता है। यह कश्मीरी कवि हैं, इन्होंने श्रीकण्ठचरित नामक महाकाव्य की रचना की है जो 25 सर्गों में है। इसमें भगवान् शिव और त्रिपुरासुर के युद्ध पर आधारित कथा का वर्णन किया गया है। इनकी शैली कोमल है पदों में लालित्य भी है। यह कश्मीरी राजा जयसिंह 1126 से 1150 तक के दरबार में थे। इसी क्रम में एक जैन कवि हरिश्चन्द्र का नाम आता है।

धर्मशर्माभ्युदय महाकाव्य

हरिश्चन्द्र द्वारा रचित महाकाव्य का नाम धर्मशर्माभ्युदय है। इसमें इक्कीस सर्ग हैं। इस महाकाव्य की रचना पन्द्रहवें जैन तीर्थंकर धर्मनाथ के चरित के आधार पर की गई है। इस ग्रन्थ की हस्तलिखित प्रति भी प्राप्त होती है। इनका समय लगभग 11वीं शताब्दी माना जाता है। इनके इस महाकाव्य में महाकाव्य के लक्षण घटित होते हैं। महाकाव्य के इस विकास क्रम में श्रीहर्ष का नैषधीयचरित कम महत्त्वपूर्ण नहीं है ।

नैषधीयचरित महाकाव्य

यह बृहत्त्रयी के कवि हैं ,इन्होंने अपने को कान्यकुब्ज नरेश का प्रिय पात्र उल्लिखित किया है। ये जयचन्द्र के दरबार में थे, इनका समय 1156 ईसवी से लेकर 1193 ईसवी तक माना जाता है। नैषधीयचरित इनके द्वारा रचित महाकाव्य है, इसमें 22 सर्ग हैं। इस महाकाव्य में निषध देश के महाराज नल के पवित्र चरित्र का अत्यन्त रमणीय शैली में वर्णन किया गया है। इसमें नल और दमयन्ती का रूप वर्णन, मृगया बिहार, हंस प्रसंग, दमयन्ती का स्वयंवर, नल का देवदूत बनना, सरस्वती द्वारा राजाओं का परिचय, नल दमयन्ती का विवाह, दमयन्ती नल का प्रथम रात्रि का रुचिर मिलन का वर्णन पाण्डित्यपूर्ण शैली में किया है।

वस्तुतः महाकाव्य की परम्परा भारत में अक्षुण्ण है जो रामायण के बाद निरन्तर चलती आ रही है। नए-नए कथानक भी महाकाव्य के विषय बने हैं। इस श्रृंखला में 1140 ई0 का वाग्भट रचित नेमिनिर्वाण महाकाव्य, अमरचन्दसूरि का बालभारत 1241 ई0, देवप्रभसूरि 1250 ई0 का पाण्डवचरित विशेष प्रसिद्ध है। इनके अलावा कविराजसूरि 10 वीं शताब्दी के राघवपाण्डवीयम् 13 सर्गों का महाकाव्य है। इसमें रामायण और महाभारत की कथा एक साथ पिरोई गई है। यह वक्रोक्ति परम्परा का महाकाव्य है। ऐतिहासिक महाकाव्य की परम्परा में पद्मगुप्त का नवसाहसांकचरितम् 1005 ई0 का है। इसमें 18 सर्गों में परमार वंश के राजाओं के प्रमाण पूर्ण ऐतिहासिक वर्णन उपलब्ध हैं। इसी प्रकार बिल्हण कवि के द्वारा रचित विक्रमांकदेवचरितम् भी 18 सर्गों का महाकाव्य है। इसमें कश्मीर के प्राकृतिक सौन्दर्य और वहाँ की विद्वत्ता से लेकर 18 सर्गों में कल्याण के राजा विक्रमादित्य षष्ठ का विस्तार से वर्णन किया गया है।

बोध प्रश्न 3

1. रावणवध महाकाव्य की रचना किस नगर में हुई?

....

....

....

....

2. रावणवध महाकाव्य में कितने सर्ग हैं?

....

....

....

3. प्रकीर्णकाण्ड किस महाकाव्य का है?

....

....

....

4. क्षेमेन्द्र के महाकाव्य का क्या नाम है?

....

....

....

5. जानकीहरण महाकाव्य किसकी रचना है?

....

....

....

6. शिशुपालवध में कितने सर्ग हैं ?

....

....

....

7. दस अवतार किसके बताए गए हैं?

....

....

....

अभ्यास प्रश्न 3

1. रावणवध महाकाव्य का संक्षेप में परिचय लिखिये।

1.5 सारांश

महाकाव्य की उत्पत्ति एवं विकास से सम्बन्धित इस इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि प्राचीन भारतीय साहित्य कविता का उद्‌भव क्रमशः वेदों तथा रामायण काल से मान्य है। इसके लिए वैदिक सूक्त से लेकर नाराशंसी गाथाएं पुराणों के गीत भी प्रमाण हैं। संस्कृत व्याकरण के प्रसिद्ध आचार्यों ने भी महाकाव्यों की रचनाएं की हैं। रामायण की रचना के लिए क्रौंच पक्षी की कथा प्रसिद्ध है, उसमें ब्रह्मा ने अवतरित होकर वाल्मीकि को रामायण रचने की प्रेरणा दी। वस्तुतः महाकाव्यत्व की सिद्धि के लिए कालान्तर में अलंकारिक आचार्य जैसे विश्वनाथ ,दण्डी आदि ने महाकाव्य के सूत्रबद्ध लक्षण लिखे। किन्तु उसके पूर्व

ही लौकिक संस्कृत भाषा में रामायण और महाभारत नामक दो महान् ग्रन्थ लिखे जा चुके थे। इनमें बाद में लिखे गए लक्षणों की परीक्षा करने पर यह ग्रन्थ महाकाव्य के रूप में ही प्रतिष्ठित हुए। इन्हीं दोनों ग्रन्थों से कथानक का ग्रहण करके बाद के कवियों ने अपने-अपने महाकाव्यों की रचनाएं कीं। जिनमें महाकाव्यों के विकास क्रम में महाकवि कालिदास का रघुवंश और कुमारसम्भव ग्रहण किया जाता है। कालिदास के पश्चात् बौद्ध धर्माचार्य व प्रसिद्ध कवि अश्वघोष का बुद्धचरित व सौन्दरनन्द नामक महाकाव्य इसी श्रेणी में गिने जाते हैं। जिनमें महाकाव्य के लिए सभी सामग्रियों के वर्णन उपलब्ध हैं। अश्वघोष के पश्चात् अर्थगौरव के लिए भारवि के कुमारसम्भव नामक महाकाव्य का नाम प्रसिद्ध है जिसमें युधिष्ठिर द्वारा दुर्योधन की राजव्यवस्था का समाचार जानने के लिए वनेचर को गुप्तचर बनाकर भेजा जाता है। 18 सर्गों के इस महाकाव्य में महाकाव्य की दृष्टि से सभी वर्णनों की परीक्षा की जा सकती है। इसी क्रम में रावणवध महाकाव्य के रचयिता महाकवि भट्टि भी महाकाव्यों की रचना में कम नहीं हैं। कुमारदास का महाकाव्य जानकीहरण भी महाकाव्यता सिद्ध करता है। क्रमशः कालिदास की उपमा ,भारवि के अर्थगौरव तथा श्रीहर्ष के पदलालित्य को समन्वित करते हुए माघ ने शिशुपालवध की रचना करके प्रतिष्ठा प्राप्त की। नैषधीयचरित श्रीहर्ष की रचना है, जिसमें नल दमयन्ती की कथा का वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त महाकाव्य परम्परा में दशावतारचरित के रचयिता क्षेमेन्द्र, श्रीकण्ठचरित के रचयिता मंखक तथा जैन कवि का महाकाव्य धर्मशर्माभ्युदय परिगणित है। ऐतिहासिक महाकाव्य के क्रम में नवसाहसांकचरित तथा विक्रमांकदेवचरित प्रसिद्ध हैं। इस इकाई के अध्ययन से आपने महाकाव्य रचना की संक्षिप्त परम्परा की जानकारी प्राप्त की है।

1.6 शब्दावली

मतैक्य	–	एकमत होना
संवाहक	–	आगे बढाने वाला
अधिसंख्य	–	अधिक संख्या में
उद्भव	–	उत्पन्न होना
उपजीव्य	–	जिससे ग्रहण किया जाय वह उपजीव्य कहलाता है
उपजीवी	–	जो ग्रहण करता है वह उपजीवी कहलाता है
रचयिता	–	लेखक
ऐतिहासिक	–	इतिहास सम्बन्धी

1.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास – आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास –वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास – डॉ शिवमूर्ति शर्मा , दया पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद
4. वाल्मीकि रामायण – गीताप्रेस गोरखपुर

1.8 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. (i) गलत (ii) सही (iii) सही (iv) गलत
   (v) गलत (vi) गलत
2. वाल्मीकि
3. क्रौंच
4. व्याध
5. ब्रह्मा से
6. एक लाख
7. शतसाहस्त्रीसंहिता

बोध प्रश्न 2

1. (i) गलत (ii) गलत (iii) गलत
   (iv) गलत (v) सही (vi) गलत
2. (i) पातालविजय (ii) वैदर्भी (iii) 28
   (iv) वीर (v) ऐहोल (vi) वररुचि

बोध प्रश्न 3

1. वलभी
2. 22 सर्ग
3. रावणवध महाकाव्य
4. दशावतारचरित
5. कुमारदास
6. 20 सर्ग
7. विष्णु के

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

इकाई 2 खण्डकाव्य (गीतिकाव्य) और मुक्तक काव्य की उत्पत्ति तथा विकास

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- गीतिकाव्य का स्वरूप तथा गीतिकाव्य के तत्त्वों के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे ।
- संस्कृत वाङ्मय में गीतिकाव्य की उत्पत्ति तथा उसके विकास के बारे में ज्ञान प्राप्त करेंगे।
- संस्कृत गीतिकाव्यों के भेद तथा उनके तत्त्वों के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे।
- कालिदास की कृतियों में मेघदूत और ऋतुसंहार दोनों गीतिकाव्यों का विशिष्ट स्थान है। इन दोनों में प्रतिपादित काव्य सौन्दर्य तथा रचना वैशिष्ट्य से परिचित होंगे।
- आप संस्कृत की पारिभाषिक शब्दावली तथा विशिष्ट प्रयोग विधि का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

2.1 प्रस्तावना

काव्य में रस का बड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। ध्वनि-प्रधान काव्य को उत्तम काव्य कहते हैं उसमें भी असंलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्य अर्थात् रस व्यङ्ग्य का स्थान प्रमुख है। जिस काव्य में रस नहीं है तथा वैचित्र्य मात्र दिखाई पड़ता है उसे मध्यम काव्य कहा जाता है प्रबन्ध काव्य के विस्तृत होने के कारण इसमें अनेक प्रकार के भावों की अभिव्यक्ति होती है। परन्तु मुक्तक तथा छोटे-छोटे काव्यों में केवल एक ही प्रकार की भावना की अभिव्यक्ति की संभावना होती है।

संस्कृत वाङ्मय में वैदिक काल से ही काव्य का निदर्शन मिलता है। वैदिक ऋषियों ने गीतिकाव्य को भी अभिव्यंजित किया है। ऋग्वेद में गीतिकाव्य के बहुत से उदाहरण देखने को मिलते हैं। लौकिक संस्कृत काव्य के उदय होने के अनन्तर प्रायः सभी विधाओं में गीतिकाव्य का प्रयोग कवियों के द्वारा किया गया है। इसी क्रम में रामायण, महाभारत के रास्ते से गौणरूप में प्रतिपादित गीतिकाव्य कालिदास के समय में स्वतन्त्र रूप से प्रमुख स्थान को प्राप्त हुआ। गीतिकाव्य में भावना उच्चस्तरीय होनी चाहिए, जिससे गीतिकाव्य में माहात्म्य आता है। संस्कृत साहित्य में स्वतन्त्र रूप से गीतिकाव्य की रचना बहुत ही अल्प मात्रा में हुयी है। काव्य परम्परा को देखने से हमारे सामने कुछ महत्त्वपूर्ण गीतिकाव्य प्रस्तुत होते हैं। जिनमें कालिदास के द्वारा लिखित मेघदूत, ऋतुसंहार, भर्तृहरि के द्वारा लिखित श्रृंगारशतक, नीतिशतक, वैराग्यशतक, तीर्थंकरनेमिनाथ के द्वारा लिखित नेमिदूत, अमरुक के द्वारा लिखित अमरुकशतक आदि प्रमुख हैं।

2.2 खण्डकाव्य (गीतिकाव्य) का लक्षण

गीतिकाव्य के लक्षण के सन्दर्भ में काव्यशास्त्रियों ने कोई विशेष लक्षण प्रस्तुत नहीं किया है। साहित्यदर्पणकार ने खण्डकाव्य की चर्चा करते हुए उसका लक्षण निम्न रूप से किया है–

भाषा विभाषा नियमात् काव्यं सर्गसमुत्थितम्।
एकार्थप्रवणैः पद्यैः सन्धि-साग्रयवर्जितम्।
खण्डकाव्यं भवेत् काव्यस्यैकदेशानुसारि च।

(साहित्यदर्पण–6/239)

इस परिभाषा के अनुसार किसी भाषा या उपभाषा में सर्गबद्ध एवं एक कथा का निरूपक ऐसा पद्यात्मक ग्रन्थ जिसमें सभी सन्धियाँ न हों वह खण्डकाव्य है। वह महाकाव्य के केवल एक अंश का ही अनुसरण करता है। हिन्दी साहित्यकोश में गीतिकाव्य के प्रसंग में कहा गया है कि "गीतिकाव्य हृदय की गम्भीर भावनाओं का समावेश है, जो कि सहज उद्रेक तथा प्राकृत वेग के साथ स्फुरित होती है।" तीव्र भावना के कारण उत्पन्न हुए इस गीतिकाव्य में रसात्मकता, सरल-स्वाभाविक मनोवृत्तियाँ भावावेश स्वतः प्रवर्तित होते हैं। इसके अतिरिक्त 'इन्साइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटेनिका' में गीतिकाव्य के लक्षण के सन्दर्भ में कहा गया है– " कोई भी कवि सापेक्ष अथवा संकीर्ण दृष्टि से अपनी अभिव्यक्ति से अभिभूत होता है। अतः स्वतन्त्र चरित्र को धारण करने में असमर्थ हो जाता है क्योंकि जो पात्र होते हैं वे अपना भार स्वयं ही वहन करते हैं। दूसरे शब्द में कहा जाये तो कवि अपने आप का ही अथवा अपनी अनुभूति को प्रकारान्तर से चित्रित करता है। कवि निरपेक्ष अथवा पूर्ण दृष्टि से अपने से अभिन्न पात्रों की सृष्टि करता है जिसका व्यक्तित्व स्वतन्त्र होता है। गीति प्रवृत्ति का मूल आधार आत्मनिष्ठ होता है।" गीतिकाव्य में आत्मनिष्ठता का समावेश आवश्यक होता है।

2.3 खण्डकाव्य (गीतिकाव्य) की उत्पत्ति एवं विकास

संस्कृत साहित्य में प्रथम ग्रन्थ के रूप में वेद को गौरव प्राप्त है। इसमें दो प्रकार की बातें भाव प्रकाशन तथा विचार प्रकाशन उपस्थित हैं । वेद का विचार प्रकाशन मुख्य कार्य है तथा भाव प्रकाशन गौण है। यह उस समय के वाणी की स्थिति थी जब मानव आचार्य, गुरू अथवा ऋषि पद पर प्रतिष्ठित होता है। वह कभी-कभी परम शक्ति से निवेदन करता है तो कभी-कभी शिष्य मण्डली को उपदेश देता है। ऋग्वेद में काव्य तत्त्व का प्रकाशन प्रचुर मात्रा में प्राप्त होता है। इसमें गीतिकाव्य के सुन्दर उदाहरण प्राप्त होते हैं। रामायण एक प्रबन्ध काव्य है फिर भी वाल्मीकि ने अनेक स्थलों पर गीतिकाव्य के तत्त्वों का प्रयोग किया है। गीतिकाव्य की विकास परम्परा में महाभारत का भी अप्रत्यक्ष रूप से योगदान अवश्य है। वाल्मीकि ने अपने मनोभाव को प्रकट करने के लिए काव्य की जिस प्रवृत्ति का प्रारम्भ किया वह महाभारत में भी स्पष्ट रूप से लक्षित होता रहा है। महाभारत के स्वयंवर अवसर में, नल उपाख्यान में द्रुपद की मनोदशा तथा पाण्डवों के वन गमन काल में करुण क्रन्दन आदि अनेक स्थलों में गीतिकाव्य के लक्षण घटित होते हैं। रामायण, महाभारत जैसे आर्ष काव्यों में भी अनुभूत भावों को गीति के रूप में प्रकट किया गया है। महाकाव्य में गाम्भीर्य, प्रशस्तता तथा उदात्तता गुण अपेक्षित होता है किन्तु इसके विपरीत गीतिकाव्य में माधुर्य, मृदुता तथा आन्तरिक वेग आदि गुण मुख्य होते हैं। व्याकरणशास्त्र के प्रसिद्ध आचार्य पाणिनि के 'पातालविजय' काव्य में भी गीतिकाव्य के उदाहरण प्राप्त होते हैं। महाकवि कालिदास की रचनाओं में गीतितत्त्व विकसित रूप में प्रकट हुआ है। कालिदास के नाम से संस्कृत साहित्य में अनेक रचनाएँ प्राप्त होती हैं परन्तु उनमें दो गीतिकाव्य के रूप में सुप्रतिष्ठित हैं– मेघदूत तथा ऋतुसंहार । मेघदूत के दो भाग पूर्वमेघ तथा उत्तरमेघ प्राप्त होते हैं। इसमें नायक यक्ष अपनी प्रेयसी के पास सन्देश प्रेषण के लिए दूत के रूप में मेघ का चयन करता है।

धूमज्ज्योतिःसलिलमरुतां सन्निपातः क्व मेघः
सन्देशार्था क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीया।
इत्यौत्सुक्यादपरिगणयन् गुह्यकस्तं ययाचे
कामार्ता हि प्रकृतिकृपणास्चेतनाचेतनेषु।।

(पूर्वमेघ – 5)

पूर्वमेघ में प्रकृति के अनेक मनोहर चित्र प्रस्तुत हैं। कालिदास का प्रकृति चेतना में विश्वास है जिसको मेघदूत में उन्होंने हर जगह प्रदर्शित किया है। ऋतुसंहार की भी गणना खण्ड अथवा गीतिकाव्य में की जाती है। इसी क्रम में जयदेव का गीतगोविन्द, भर्तृहरि का शतकत्रय, अमरुक कवि का अमरुकशतक, गोवर्धनाचार्य कृत आर्याशप्तसती, पण्डितराज जगन्नाथ का विलासकाव्य, गंगालहरी आदि गीतिकाव्य प्रसिद्ध हैं।

2.4 खण्डकाव्य (गीतिकाव्य) का स्वरूप

खण्डकाव्य के स्वरूप की चर्चा केवल कविराज विश्वनाथ ने की है जैसा कि षष्ठ परिच्छेद में यह लक्षण प्रदर्शित किया है– **"खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारि च"**। अर्थात् काव्य के एक देश का अनुसरण जो करे इस प्रकार का काव्य खण्डकाव्य कहलाता है। विश्वनाथ ने उदाहरण के रूप में मेघदूत को प्रस्तुत किया है। खण्डकाव्य काव्यशास्त्र के अनुसार प्रबन्ध काव्य का एक रूप है। जीवन की किसी घटना विशेष को लेकर लिखा गया काव्य खण्डकाव्य है। "खण्डकाव्य" शब्द से ही स्पष्ट होता है कि इसमें मानव जीवन की किसी एक ही घटना की प्रधानता रहती है। कवि जीवन की किसी सर्वोत्कृष्ट घटना से

प्रभावित होकर जीवन के उस खण्ड विशेष का अपने काव्य में पूर्णतया उद्घाटन करता है। प्रबन्धात्मकता महाकाव्य एवं खण्डकाव्य दोनों में ही रहती है परन्तु खण्डकाव्य के कथासूत्र में जीवन की अनेकरूपता नहीं होती है। इसलिए इसका कथानक कहानी की भाँति शीघ्रतापूर्वक अन्त की ओर जाता है। महाकाव्य में प्रमुख कथा के साथ अन्य अनेक प्रासंगिक कथायें भी जुड़ी रहती हैं खण्डकाव्य में केवल एक प्रमुख कथा रहती है, प्रासंगिक कथाओं को इसमें स्थान नहीं मिलने पाता है। खण्डकाव्य के सन्दर्भ में भारतीय विद्वानों ने भी अपने मत प्रस्तुत किए हैं जिनमें श्यामसुन्दरदास महोदय ने कहा है कि "गीतिकाव्य में कवि अपने अन्तःकरण में प्रविष्ट हो जाता है तथा बाह्य जगत् को अपने अन्तःकरण में ग्रहण करके उनके स्वभाव को प्रदर्शित करके सभी को रंजित करता है। गीतिकाव्य में कवि अपनी अनुभूतियों को लघु-लघु गेय पदों के द्वारा प्रस्तुत करते हैं।" रविन्द्र ठाकुर का गीतिकाव्य के स्वरूप के विषय में विचार है– " यह बाह्य जगत् हमारी चेतना रूपी जगत् में जब प्रविष्ट होता है उस अवस्था में कवि भिन्न ही होता है। जबकि उसका रूप वर्ण ध्वनि आदि कुछ भी परिवर्तित नहीं होता है फिर भी अपनी संवेदना, भय, हर्ष, विस्मय और विभिन्न भावनाओं के माध्यम से सहृदयों को रंजित कर देता है। इन सभी विवरणों से यह ज्ञात होता है कि गीतिकाव्य में ये प्रमुख तत्त्व हैं–

1. गीतिकाव्य में आत्मनिष्ठता अथवा अन्तर्वृत्त की प्रधानता होती है।
2. गीतिकाव्य में संगीतात्मकता होती है।
3. गीतिकाव्य में पूर्व अथवा पर के सम्बन्ध की हीनता अथवा निरपेक्षता होती है।
4. गीतिकाव्य में रसात्मकता अथवा रंजकता होती है।
5. गीतिकाव्य में भाव का अतिरेक अथवा रागात्मक अनुभूति की सान्द्रता होती है।
6. गीतिकाव्य में भाव की सान्द्रता तथा चित्रात्मक मार्मिकता का प्रयोग होता है।
7. गीतिकाव्य में सरल एवं स्वाभाविक अभिव्यक्ति होती है।
8. गीतिकाव्य में संक्षिप्तता एवं सहज अन्तःप्रेरणा का प्रयोग होता है।

2.5 खण्डकाव्य (गीतिकाव्य) की विशेषतायें

संस्कृत काव्यशास्त्र में खण्डकाव्य को सामान्य रूप से ही स्वीकृत किया गया है। संस्कृत गीतिकाव्य में श्रृंगार का वर्णन, नीति, वैराग्य तथा प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन उपलब्ध होता है। कोमल भावों का माधुर्य प्रत्येक रसिक सहृदय को अपनी ओर खींचता है। इसी कारण से संस्कृत गीतिकाव्य का बाह्यरूप जिस प्रकार से सुन्दर प्रतीत होता है उसी प्रकार से अन्तःतत्त्व भी रसपेशल होता है। गीतिकाव्य में रस की प्रतीति एवं काव्यात्मक अनुभूति के स्थिरीकरण में छन्द का भी महत्त्वपूर्ण योगदान है। गीतिकाव्य में छन्द माधुर्य के साथ सौन्दर्य का भी अनुपम चित्रण प्राप्त होता है। इसमें प्रेम की उदात्तता एवं विशुद्धता भी गुम्फित होती है। प्रेम सन्देश के लिए यह अपूर्व प्रकार है। संस्कृत गीतिकाव्य में पूर्ण सामंजस्य की अनुभूति प्राप्त होती है। मार्मिक अनुभूति के समावेश के कारण संस्कृत गीतिकाव्य में सौन्दर्य की पराकाष्ठा प्राप्त होती है। खण्डकाव्य में सौन्दर्य के वर्णन के साथ-साथ नीति तथा शिवतत्त्व की भी पर्याप्त चर्चा की गयी है। संस्कृत गीतिकाव्य में प्रकृति वर्णन एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है जिससे प्रकृति से परिचित पात्रों के मध्य में रागात्मक एकता का अद्भुत सामंजस्य अनायास ही घटित हो जाता है। सौन्दर्य बोध के साथ आनन्द और उल्लास स्वाभाविक रूप से सर्वत्र प्रसिद्ध है।

2.6 मुक्तक काव्य की उत्पत्ति और विकास

संस्कृत साहित्य में बहुत से काव्य मुक्त सरणि में लिखे गये हैं क्योंकि क्षणिक भाव के आवेश से उत्पन्न काव्य गुण की दृष्टि से मुक्तक ही होते हैं। अग्निपुराण के अनुसार– **"मुक्तकं एकैकश्चमत्कारक्षमं सताम्।"** अर्थात् मुक्तक काव्य वह है जिसका प्रत्येक श्लोक स्वतन्त्र रूप से अपने सर्वांगीण अर्थ प्रकाशन में पूर्ण समर्थ होकर सहृदयों में चमत्कार का आधायक होता है। इसके एक पद्य का दूसरे पद्य से कोई सम्बन्ध नहीं होता है। शब्दकल्पद्रुम में केशव ने मुक्तक का स्वरूप कुछ इस प्रकार से प्रदर्शित किया है–

विनाकृतं विरहितं व्यवच्छिन्नं व्यशेषितम्।
भिन्नं स्यादथ निर्व्यूहे मुक्तकं यो वातिशोभनम्।।

अर्थात् जो पद्य अर्थ के पर्यवसान में तथा रस की चर्वणा में दूसरे पर बिना अपेक्षित स्वतः पूर्ण हों उसे मुक्तक काव्य कहते हैं। मुक्तक काव्य में रस चमत्कार और समस्त विशेषताओं का समाहार अपेक्षित है। मुक्तक काव्य में अधोलिखित विशेषतायें अपेक्षित हैं–

1. मुक्तक काव्य में चमत्कार तथा गुम्फन वैशिष्ट्य आवश्यक है।
2. मुक्तक काव्य में ध्वनिगत विशेषता तथा परस्पर निरपेक्षता आवश्यक होती है।
3. मुक्तक काव्य में रमणीयता एवं रस चर्वणा आवश्यक है।
4. मुक्तक काव्य में रस की अनुभूति के द्वारा हृदय मुक्तता आवश्यक है।

संस्कृत साहित्य में मुक्तक काव्यों के अतिशय उत्कर्ष ने ही कवि और काव्य को प्रतिष्ठा दी है। इन मुक्तकों को सूक्तियाँ भी कहते थे। दण्डी ने 'काव्यादर्श' में ऐसे सूक्ति रत्नों से परिपूर्ण प्राकृत महाकाव्य 'सेतुबन्ध' का उल्लेख किया है–

महाराष्ट्राश्रयां भाषां प्रकृष्टं प्राकृतं विदुः।
सागरः सूक्तिरत्नानां सेतुबन्धादि यन्मयम्।।

(काव्यादर्श–1/34)

विल्हण ने 'विक्रमांकदेवचरित' में काव्य के आलोचकों को अपनी सूक्ति रत्नों की कसौटी के लिये आहूत किया है–

विचारशाणोत्पलपट्टिकासु मत्सूक्तिरत्ना ह्यतिथिभवन्...।।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि मुक्तक रचना करने वाले कवि तथा प्रबन्ध काव्य के रचयिता दोनों ही नीति, धर्म तथा व्यवहार सम्बन्धी ऐसी रचनायें पद्यों में करते थे, जिनको अकेले भी सभाओं में सुनकर आनन्द लिया जा सकता था। भर्तृहरि मुक्तक काव्य परम्परा के अग्रणी कवि हैं। उनकी रचनाओं में मुक्तक काव्य की सभी विशेषतायें दिखायी पड़ती हैं।

डॉ. जयशंकर त्रिपाठी का मत है कि मुक्तक काव्य का अस्तित्व भर्तृहरि की रचनाओं के पूर्व भी था, किन्तु वर्तमान में ये काव्य प्राप्त नहीं है। दण्डी ने काव्यादर्श में विद्वानों की जिस गोष्ठी की चर्चा की है उसमें कवि मुक्तक काव्य या सूक्तियाँ ही पढ़ते थे। दण्डी के अनन्तर प्रयाग स्तम्भ लेख में समुद्रगुप्त को सूक्ति काव्यों का रचयिता बताया गया है। यही सूक्ति या मुक्तक काव्य का पुराना इतिहास है जिसे कवियों के मुख से सुनने के लिये ही विद्वानों की गोष्ठियों का आयोजन होता था– '**विदग्धगोष्ठीषु विहर्तुमीशते**।' सरस्वती की उपासना कर ऐसे मुक्तक काव्यों के प्रणयन के लिये ही आशीर्वाद लिया जाता था। राजशेखर की 'काव्यमीमांसा' में एक श्लोक संग्रहीत है, जिसमें सरस्वती को सूक्तिधेनु कहा गया है–

या दुग्धापि न दुग्धेव कविदोग्धृभिरन्हवम्।
हृदि नः सन्निधत्तां सा सूक्तिधेनुः सरस्वती।।

मुक्तक कवियों की रचना करने वाले ऐसे कवियों की परम्परा समान रूप से संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश भाषा में विद्यमान है। संस्कृत साहित्य की मुक्तक काव्य परम्परा में भर्तृहरि, अमरुक, अभिनन्द, योगेश्वर का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कवीन्द्रवचनसमुच्चय, सदुक्तिकर्णामृत, सुभाषितमुक्तावली, शारंगधरपद्धति आदि संस्कृत साहित्य के प्रमुख मुक्तक काव्य हैं। हाल विरचित 'गाथासप्तशती' में प्राकृत मुक्तक काव्यों का संकलन है। अपभ्रंश मुक्तक काव्यों का संकलन हेमचन्द्र की रचना 'वर्णरत्नाकर' में पाया जाता है। इनके अतिरिक्त मुक्तक काव्यों के प्रति आचार्यों का अत्यधिक आदर रहा है। आनन्दवर्धन, मम्मट, कुन्तक आदि ने ऐसे मुक्तकों को अपने लक्षण ग्रन्थों में उद्धृत किया है और उनके काव्यगुणों की प्रशंसा की है।

बोध प्रश्न 1

1. निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√)का चिह्न लगाइये–

   i) खण्डकाव्य का दूसरा नाम है– गद्यकाव्य/गीतिकाव्य

   ii) आर्षकाव्य है– रामायण/रघुवंश

   iii) आचार्य पाणिनि की कृति है– पातालविजय/स्वर्गारोहण

2. आचार्य विश्वनाथ के अनुसार खण्डकाव्य का लक्षण लिखिये।

   ....

   ....

   ....

3. मुक्तक काव्य की तीन विशेषतायें लिखिये।

   ....

   ....

   ....

अभ्यास प्रश्न 1

1. खण्डकाव्य (गीतिकाव्य) का लक्षण लिखिये।
2. मुक्तक काव्य की उत्पत्ति और विकास पर प्रकाश डालिये।

2.7 खण्डकाव्य (गीतिकाव्य) और मुक्तक काव्य का परिचय

संस्कृत साहित्य में स्वतन्त्र रूप से गीतिकाव्य की रचना का प्रारम्भ महाकवि कालिदास से देखने को मिलता है। उनकी दो प्रसिद्ध गीतिकाव्य की रचनाएँ मेघदूत तथा ऋतुसंहार प्राप्त होती हैं।

2.7.1 मेघदूत

यह एक प्रबन्धात्मक गीतिकाव्य है जिसके पूर्वमेघ एवं उत्तरमेघ दो भाग हैं। इन दोनों भागों में लगभग ११५ श्लोक प्राप्त होते हैं। मेघदूत का अंगीरस विप्रलम्भ श्रृंगार है। सम्पूर्ण मेघदूत

में एकमात्र मन्दाक्रान्ता छन्द का प्रयोग किया गया है। कुबेर का अनुचर यक्ष अपने उत्तरदायित्व से च्युत होने के कारण एक वर्ष के लिए प्रियाविरह को प्राप्त करता है। वह रामगिरि नामक स्थान पर आठ माह व्यतीत करता है। इसके पश्चात् वर्षा ऋतु के आगमन पर आषाढ के पहले दिन एक मेघ को देखता है। यक्ष मेघ से अपना प्रणय सन्देश अपनी पत्नी के पास प्रेषित करने के लिए निवेदन करता है। यक्ष मेघ की संवेदनशीलता से प्रभावित होता है क्योंकि वह जानता है कि मेघ उसकी कामवेदना को ठीक तरह से उसकी प्रिया से बता सकता है –

सन्तप्तानां त्वमसि शरणं तत्पयोदः प्रियायाः
सन्देशं मे हर धनपतिक्रोधविश्लेषितस्य ।
गन्तव्या ते वसतिरलका नाम यक्षेश्वराणां
बाह्योद्यानस्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्या ।।

(पू.मे. 7)

अर्थात् सन्तप्त लोगों के मात्र तुम ही एक शरण हो, अतः मेरे इस सन्देश को यक्षों की नगरी अलका तक पहुँचा दो। जहाँ पर भगवान् शंकर के मस्तक से निकलने वाले सुन्दर चन्द्रिका के कारण वहाँ के भवन श्वेत रूप में दिखते हैं। कालिदास मेघ को जाने के लिए मार्ग बताते हैं जिससे भारत के भौगोलिक मार्ग का पता चलता है। कालिदास ने मार्ग के सभी नगरों जैसे उज्जयिनी, विदिशा आदि का उल्लेख किया है। इसके अतिरिक्त नदियों की भी पर्याप्त चर्चा प्रस्तुत की है जैसे कि गंगा, यमुना, सरस्वती, रेवा, गन्धवती, क्षिप्रा आदि । मेघदूत में प्रकृति का अत्यन्त मनोरम दृश्य प्रस्तुत किया गया है। उत्तरमेघ का यह श्लोक अत्यन्त प्रसिद्ध है–

त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलायाम्
आत्मानं ते चरणपतितं यावदिच्छामि कर्तुं।
अस्रैस्तावन्मुहुरुपचितैः दृष्टिरालुप्यते मे
क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते सङ्गमं नौ कृतान्तः।।

(उ.मे. 47)

यक्ष की विरह की यह करुणापूर्ण अवस्था है जिसमें चित्र में भी उसका प्रिया के साथ समागम नहीं हो पाता है। यक्ष कहता है कि प्रिये! जब कभी धातु (चाक) के द्वारा तुम्हारा चित्र बना कर तुम्हारे चरण में गिरकर क्षमा याचना करना चाहता हूँ तब वह सम्भव नहीं हो पाता है क्योंकि निरन्तर मेरे आँख से आँसू निकलने के कारण तुम्हारी चित्र में प्रदर्शित छवि को भी नहीं देख सकता हूँ, क्योंकि निर्दय विधाता चित्र में भी हमारा मिलन नहीं चाहता है।

2.7.2 ऋतुसंहार

यह महाकवि कालिदास के द्वारा प्रणीत द्वितीय रचना है; जिसकी गणना खण्डकाव्य के रूप में होती है। यह छः सर्ग वाला एक लघु-काव्य है। इसमें छः ऋतुओं का वर्णन प्राप्त होता है। इसका वर्ण्य विषय प्रकृति चित्रण है। इस काव्य में प्रकृति आलम्बन प्रधान नहीं है अपितु उद्दीपन प्रधान है। ऋतुसंहार में कालिदास प्रिया को सम्बोधित करके छः ऋतुओं का वर्णन छः सर्गों में करते हैं। इस प्रकार विषयवस्तु की दृष्टि से यह एक प्रकृति काव्य है। कवि ने भारत के वार्षिक ऋतुचक्र का वर्णन ग्रीष्म से आरम्भ किया है और फिर प्रावृट् (वर्षा), शरत्, हेमन्त व शिशिर ऋतुओं का क्रमशः दिग्दर्शन कराते हुए प्रकृति के सर्वव्यापी सौन्दर्य, माधुर्य व वैभव से सम्पन्न वसन्त ऋतु के साथ इस कृति का समापन किया है। इस काव्य का प्रारम्भ ग्रीष्म ऋतु की प्रचण्डता को लेकर होता है तथा समाप्ति वसन्त ऋतु की सरसता में होती है।

2.7.3 शतकत्रय

संस्कृत साहित्य में बहुमुखी प्रतिभा वाले कवियों में भर्तृहरि अग्रणी हैं। जनश्रुति के अनुसार भर्तृहरि एक राजा थे जो कि पत्नी के अविश्वास के कारण विरक्त होकर अपने राज्य सिंहासन का परित्याग करके वन के लिए निकल गये। यह जनकथा आज भी प्रसिद्ध है जिसका ज्ञान नीतिशतक के अधोलिखित श्लोक से होता है –

यांचिन्तयामि सततं मयि सा विरक्ता
साप्यन्यमिच्छति जनं स जनोऽन्यसक्तः ।
अस्मत्कृते च परिशुष्यति काचिदन्या
धिक् तां च तं मदनं च इमां च मां च।।

(नीतिशतक–2)

इस श्लोक में नर तथा नारी के परस्पर विश्वासघात के ऊपर खेद प्रकट किया गया है। इसी श्लोक को भर्तृहरि के वैराग्य का कारण स्वीकार किया जाता है। भर्तृहरि ने तीन शतकों श्रृंगारशतक, नीतिशतक तथा वैराग्यशतक की रचना की है। जिसमें नीतिशतक का विशिष्ट महत्त्व है। नीतिशतक में भर्तृहरि ने अपने अनुभवों के आधार पर तथा लोक व्यवहार पर आश्रित नीति सम्बन्धी श्लोकों का संग्रह किया है। एक ओर तो उन्होंने अज्ञता, लोभ, धन, दुर्जनता, अहंकार आदि की निन्दा की है तो दूसरी ओर विद्या, सज्जनता, उदारता, स्वाभिमान, सहनशीलता, सत्य आदि गुणों की प्रशंसा भी की है। नीतिशतक के श्लोक संस्कृत विद्वानों में ही नहीं अपितु सभी भारतीय भाषाओं में सूक्ति रूप में उद्धृत किये जाते रहे हैं । यथा –

शक्यो वारयितुं जलेन हुतभुक् छत्रेण सूर्यातपो
नागेन्द्रो निशिताङ्कुशेन समदो दण्डेन गोगर्दभौ।
व्याधिर्भेषजसंग्रहैश्च विविधैर्मन्त्रप्रयोगैर्विषं
सर्वस्यौषधमस्ति शास्त्रविहितं मूर्खस्य नास्त्यौषधम्।।

(नीतिशतक – 11)

अर्थात् जल के द्वारा अग्नि को शान्त किया जा सकता है। धूप को छत्र (छाता) के द्वारा वारण किया जा सकता है। अंकुश (विशेष प्रकार का भाला) के द्वारा मतवाले हाथी को शान्त किया जा सकता है। दण्ड के द्वारा गो (गाय), गर्दभ (गदहा) आदि को हटा सकते हैं। विविध प्रकार की बीमारियों को औषधि के द्वारा दूर किया जा सकता है । सभी प्रकार की व्याधि के लिए शास्त्रों में किसी ना किसी प्रकार की औषधि की चर्चा की गयी है, परन्तु मूर्खता को हटाने के लिए कोई भी औषधि नहीं है।

श्रृंगारशतक में कवि ने रमणियों के सौन्दर्य का तथा पुरुषों को आकृष्ट करने वाले श्रृंगारमय हाव-भावों का चित्रण किया है। इस शतक में कवि ने स्त्रियों के हाव-भाव, प्रकार, उनका आकर्षण व उनके शारीरिक सौष्ठव के बारे में विस्तार से चर्चा की है। कवि का कहना है कि इन्द्र आदि देवताओं को भी अपने कटाक्षों से विचलित करने वाली रमणियों को अबला मानना उचित नहीं है। नारी अपने आकर्षक हाव-भावों से मानव मन को आकृष्ट करके बाँध लेती है – **'समस्तभावैः खलु बन्धनं स्त्रियः'**। इसके अतिरिक्त भर्तृहरि ने अपने शतक में वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर ऋतु में स्त्री व स्त्री प्रसंग का अत्यधिक श्रृंगारिक (कामुक) वर्णन किया है। वास्तव में इस शतक में सांसारिक भोग और वैराग्य इन दो विकल्पों के मध्य अनिश्चय की मनोवृत्ति का चित्रण हुआ है जो वैराग्यशतक में पहुँचकर निश्चयात्मक बन जाती है।

वैराग्यशतक में भर्तृहरि ने संसार की सारता और वैराग्य के महत्त्व का प्रतिपादन किया है। इस शतक में काव्य-प्रतिभा और दार्शनिकता का अद्भुत समन्वय किया गया है। इसमें सांसारिक आकर्षणों और भोगों के प्रति उदासीनता के उभरते हुये भावों का चित्रण दिखायी देता है। कवि ने कितनी गम्भीर बात कही है–

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ताः तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः ।
कालो न यातो वयमेव याताः तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः ।।

अर्थात् भोगों को हमने नहीं भोगा, बल्कि भोगों ने ही हमें भोग लिया। तपस्या हमने नहीं की, बल्कि हम खुद तप गए। काल (समय) कहीं नहीं गया बल्कि हम स्वयं चले गए । इस सभी के बाद भी मेरी कुछ पाने की तृष्णा नहीं गयी (पुरानी नहीं हुई) बल्कि हम स्वयं जीर्ण हो गए ।

2.7.4 गीतगोविन्द

गीतगोविन्द जयदेव की काव्य रचना है। गीतगोविन्द में श्रीकृष्ण की गोपिकाओं के साथ रासलीला, राधाविषाद वर्णन, कृष्ण के लिए व्याकुलता, उपालम्भ वचन, कृष्ण की राधा के लिए उत्कण्ठा, राधा की सखी द्वारा राधा के विरह सन्ताप का वर्णन है। 'श्री गीतगोविन्द' काव्य में बारह सर्ग हैं, जिनका चौबीस प्रबन्धों में विभाजन हुआ है। इन प्रबन्धों का उपविभाजन पदों अथवा गीतों में हुआ है। प्रत्येक पद अथवा गीत में आठ पद्य हैं। गीतों के वक्ता कृष्ण, राधा अथवा राधा की सखी हैं। अत्यन्त नैराश्य और निरवधि-वियोग को छोड़कर भारतीय प्रेम के शेष सभी रूपों अभिलाषा, ईर्ष्या, प्रत्याशा, निराशा, कोप, मान, पुनर्मिलन तथा हर्षोल्लास आदि का बड़ी तन्मयता और कुशलता के साथ वर्णन किया गया है। प्रेम के इन सभी रूपों का वर्णन अत्यन्त रोचक, सरस और सजीव होने के अतिरिक्त इतना सुन्दर है कि ऐसा प्रतीत होता है, मानो कवि शास्त्र अर्थात् चिन्तन को भावना का रूप अथवा अमूर्त को मूर्त रूप देकर उसे कविता में परिणत कर रहा है। जयदेव ने इस काव्य में वैदर्भी रीति का प्रयोग किया है तथा उनमें अनुपम माधुर्य भी है। मानवीय सौन्दर्य के चित्रण में प्रकृति को बड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इस सन्दर्भ में 'गीतगोविन्द' काव्य में ऋतुराज वसन्त, चन्द्र-ज्योत्स्ना, सुरभित समीर तथा यमुना तट के मोहक कुंजों का बड़ा ही सुन्दर वर्णन देखने को मिलता है। यहाँ तक कि इस काव्य में पक्षी तक प्रेम की शक्ति और महिमा का गान करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं।

2.7.5 अमरुकशतक

अमरुकशतक संस्कृत का एक गीतिकाव्य है। इसके रचयिता अमरु या अमरुक हैं। इसका रचना काल नवीं शती माना जाता है। इसमें १०० श्लोक हैं जो अत्यन्त श्रृंगारपूर्ण एवं मनोरम हैं । अमरुकशतक के पद्य श्रृंगार रस से पूर्ण हैं तथा प्रेम के जीते जागते चटकीले चित्र खींचने में विशेष समर्थ हैं। प्रेमी और प्रेमिकाओं की विभिन्न अवस्थाओं में विद्यमान श्रृंगारी मनोवृत्तियों का अतीव सूक्ष्म और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण इन सरस श्लोकों की प्रधान विशिष्टता है।

बोध प्रश्न 2

1. निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिह्न लगाइये–
   - i) महाकवि कालिदास की रचना है – मेघदूत / गीतिगोविन्द
   - ii) मेघदूत में एकमात्र प्रयुक्त छन्द है – शिखरिणी / मन्दाक्रान्ता

iii) ऋतुसंहार में सर्ग हैं – 6/7

iv) शतकत्रय के प्रणेता हैं – कालिदास /भर्तृहरि

v) जयदेव प्रणीत काव्य रचना है – गीतगोविन्द /आर्यासप्तशती

vi) गीतगोविन्द में रीति का प्रयोग किया गया है– पांचाली/वैदर्भी

2. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये।**

i) मेघदूत में........................ और .... दो भाग हैं।

ii) मेघदूत का अंगीरस .... है।

iii) ऋतुसंहार में .... श्लोक हैं।

iv) गीतगोविन्द काव्य में .... सर्ग हैं।

v) अमरुकशतक में .... श्लोक हैं।

अभ्यास प्रश्न 2

1. भर्तृहरि के शतकत्रय का परिचय लिखिये।

2.8 सारांश

- इस इकाई में आपने खण्डकाव्य (गीतिकाव्य) की उत्पत्ति एवं उसके विकास की परम्परा के विषय में अध्ययन किया।
- आपने खण्डकाव्य (गीतिकाव्य) के स्वरूप, लक्षण, भेद तथा उसकी विशेषताओं के विषय में जानकारी प्राप्त की।
- महाकवि कालिदास संस्कृत साहित्य के प्रमुख कवि हैं; आपने उनकी कृतियों मेघदूत एवं ऋतुसंहार का परिचय प्राप्त किया।
- आपने भर्तृहरि के शतकत्रय के विषय में जानकारी प्राप्त की।
- आपने संस्कृत साहित्य के प्रमुख गीतिकाव्य गीतगोविन्द तथा अमरुकशतक का परिचय प्राप्त किया।

2.9 शब्दावली

अतिरेक	=	अधिक ज्यादा
अन्तःप्रेरणा	=	हृदय से निःसरित
असंलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्य	=	ध्वनि काव्य का एक प्रकार (रस ध्वनि)
अभिव्यक्ति	=	प्रकट होना या उत्पन्न होना
आत्मनिष्ठता	=	अपने भाव में रहना
कृतान्त	=	यमराज
दन्ती	=	हाथी
सान्द्रता	=	सघनता
सापेक्ष	=	किसी पर आश्रित रहने वाली वस्तु
हुतभुक्	=	अग्नि, आग

2.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. गीतिकाव्यानुचिन्तनम् – नेमिचन्द शास्त्री, सुशीला प्रकाशन, धौलपुर
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास – बलदेव उपाध्याय, शारदा मन्दिर, वाराणसी
3. संस्कृत साहित्य की रूपरेखा – पाण्डेय एवं व्यास, साहित्य निकेतन प्रकाशन, कानपुर
4. हिन्दी साहित्य कोश – ज्ञान मण्डल लिमिटेड, वाराणसी

2.11 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. (i) गीतिकाव्य (ii) रामायण (iii) पातालविजय
2. आचार्य विश्वनाथ के अनुसार खण्डकाव्य का लक्षण इस प्रकार है, 'खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारि च' अर्थात् काव्य के एक देश का अनुसरण करने वाला काव्य खण्डकाव्य कहलाता है।
3. मुक्तक काव्य की विशेषतायें इस प्रकार हैं–

   i) मुक्तक काव्य में चमत्कार तथा गुम्फन वैशिष्ट्य आवश्यक है।

   ii) मुक्तक काव्य में रमणीयता एवं रसचर्वणा आवश्यक है।

   iii) मुक्तक काव्य में ध्वनिगत विशेषता तथा परस्पर निरपेक्षता आवश्यक होती है।

बोध प्रश्न 2

1. (i) मेघदूत (ii) मन्दाक्रान्ता (iii) 6

   (iv) भर्तृहरि (v) गीतगोविन्द (vi) वैदर्भी
2. i) पूर्वमेघ, उत्तरमेघ

   ii) विप्रलम्भ श्रृंगार

   iii) 144

   iv) 12

   v) 100

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

इकाई 3 प्रमुख महाकवियों का परिचय : कालिदास, अश्वघोष, भारवि, माघ, श्रीहर्ष और अन्य

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 कालिदास

- 3.2.1 जीवन-वृत्त
- 3.2.2 कर्तृत्व
- 3.2.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

3.3 अश्वघोष

- 3.3.1 जीवन-वृत्त
- 3.3.2 कर्तृत्व
- 3.3.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

3.4 भारवि

- 3.4.1 जीवन-वृत्त
- 3.4.2 कर्तृत्व
- 3.4.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

3.5 माघ

- 3.5.1 जीवन-वृत्त
- 3.5.2 कर्तृत्व
- 3.5.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

3.6 श्रीहर्ष

- 3.6.1 जीवन-वृत्त
- 3.6.2 कर्तृत्व
- 3.6.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

3.7 अन्य महाकवि

- 3.7.1 भट्टि
- 3.7.2 कुमारदास
- 3.7.3 रत्नाकर

3.8 सारांश

3.9 शब्दावली

3.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.11 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- कालिदास, अश्वघोष, भारवि आदि महाकवियों के जीवन-वृत्त के विषय में जान सकेंगे।

- कालिदासादि महाकवियों की रचनाओं से परिचित होंगे।
- कालिदासादि महाकवियों की शैलीगत विशिष्टताओं के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- संस्कृत साहित्य के कुछ अन्य महाकवियों जैसे भट्टि, कुमारदास, रत्नाकर के विषय में जान सकेंगे तथा उनकी रचनाओं से परिचित होंगे।

3.1 प्रस्तावना

इस खण्ड की प्रथम एवं द्वितीय इकाई में आपने महाकाव्य, खण्डकाव्य (गीतिकाव्य) और मुक्तककाव्य की उत्पत्ति तथा विकास के विषय में जानकारी प्राप्त की है। इस इकाई में संस्कृत साहित्य के प्रमुख महाकवियों के विषय में चर्चा की जायेगी। **"सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायकः सुरः .... ।।"** साहित्यदर्पणकार विश्वनाथ के लक्षण का अनुसरण कर कालिदास, अश्वघोष, भारवि, माघ आदि महाकवियों ने अपने ग्रन्थों का प्रणयन किया तथा संस्कृत साहित्य में दीपशिखा कालिदास, आतपत्र भारवि, घण्टामाघ जैसी उपाधियों से स्वयं को अलंकृत किया। इस इकाई में आप इन्हीं महाकवियों के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व और शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे।

3.2 कालिदास

महाकवि कालिदास संस्कृत साहित्य के श्रेष्ठ कवि एवं नाटककार हैं। यहाँ आप उनके जीवन-वृत्त, कर्तृत्व तथा शैलीगत वैशिष्ट्य के विभिन्न पक्षों का अध्ययन करेंगे।

3.2.1 जीवन-वृत्त

महाकवि कालिदास के जीवन-वृत्त के विषय में कोई प्रामाणिक सामग्री उपलब्ध नहीं है। कालिदास ने अपने ग्रन्थों में बाण के समान अपने जीवन-वृत्त के विषय में कोई जानकारी नहीं दी है। उनके विषय में कुछ किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं जिनके आधार पर उनके जीवन-वृत्त पर कुछ प्रकाश पड़ता है। इन किंवदन्तियों में महाकवि कालिदास का विक्रमादित्य की सभा में नवरत्नों में स्थान, विदुषी विद्योत्तमा के साथ विवाह तदन्तर ज्ञानप्राप्ति, भोजराज की राजसभा में मुख्य स्थान की प्राप्ति आदि प्रसिद्ध हैं। कालिदास के ग्रन्थों के अध्ययन के पश्चात् यह ज्ञात होता है कि वे जन्मना ब्राह्मण और शिवभक्त थे। शिवभक्ति के साथ-साथ अन्य देवों के प्रति भी उनका आदरभाव था। रघुवंश और मेघदूत में उन्होंने जिस प्रकार से भौगोलिक परिवेश का वर्णन किया है उससे यह ज्ञात होता है कि उन्होंने भारतवर्ष की विस्तृत यात्रा की थी। उनके ग्रन्थों में धनहीनता एवं दारिद्र का अभाव है। अतः यह कहा जा सकता है कि उनका भौतिक जीवन सुखमय था तथा उन्हें आर्थिक कष्ट नहीं था।

महाकवि कालिदास के जन्मस्थान के विषय में भी विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है। विभिन्न विद्वानों ने कालिदास को काशी, बंगाल, विदर्भ, विदिशा, अयोध्या, मिथिला, कश्मीर, गढ़वाल तथा उज्जयिनी का निवासी स्वीकार किया है। महाकवि ने मेघदूत में उज्जयिनी के प्रति जिस प्रकार का आदरभाव प्रदर्शित किया है उससे यह ज्ञात होता है कि महाकवि कालिदास उज्जयिनी के निवासी थे अथवा उन्होंने अपने जीवन का अधिकांश समय उज्जयिनी में व्यतीत किया था।

महाकवि कालिदास के काल-निर्धारण के विषय में भी प्रामाणिक सामग्री का नितान्त अभाव है उनके काल-निर्धारण के विषय में जो मत प्रस्तुत किये गये हैं वे अनुमान पर आधारित

हैं। कुछ विद्वान् कालिदास का काल छठीं शताब्दी ई॰, कुछ चतुर्थ शताब्दी ई॰ और कुछ प्रथम शताब्दी ई॰पू॰ निर्धारित करते हैं तथा इस विषय में अपना-अपना प्रमाण भी प्रस्तुत करते हैं। किन्तु उपरोक्त तिथियों में कालिदास को प्रथम शताब्दी ई॰पू॰ का माना जाना नितान्त सटीक लगता है। इस पक्ष में विद्वानों ने अनेक मत प्रस्तुत किये हैं जैसे –

– कालिदास विक्रम संवत् के प्रवर्तक विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक थे, जिनका समय प्रथम शताब्दी ई॰पू॰ था।

– कालिदास के ग्रन्थों में अपाणिनीय प्रयोगों का बाहुल्य है, अतः कालिदास का काल रामायण, महाभारत की रचना काल के समीप सिद्ध होता है।

– महाकवि अश्वघोष (78 ई॰ के लगभग) पर कालिदास का स्पष्ट प्रभाव पड़ा है जो यह सिद्ध करता है कि कालिदास प्रथम शताब्दी ई॰पू॰ के थे।

– मालविकाग्निमित्र में शुंगवंशी राजा पुष्यमित्र के पुत्र अग्निमित्र को नायक बनाना, ऐतिहासिक ग्रन्थों में अप्राप्त अग्निमित्र विषयक तथ्यों का उल्लेख यह सिद्ध करता है कि कालिदास का काल अग्निमित्र के निकट अर्थात् प्रथम शताब्दी ई॰पू॰ था।

3.2.2 कर्तृत्व

महाकवि कालिदास की सात कृतियाँ प्रसिद्ध हैं जिनमें रघुवंश और कुमारसम्भव महाकाव्य, ऋतुसंहार और मेघदूत गीतिकाव्य तथा अभिज्ञानशाकुन्तल, विक्रमोर्वशीय, मालविकाग्निमित्र नाटक हैं। इनमें रघुवंश, कुमारसम्भव तथा मेघदूत लघुत्रयी में परिगणित हैं। कालिदास विरचित महाकाव्यों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है–

कुमारसम्भव–

यह महाकाव्य कालिदास की प्रारम्भिक रचना है। इसमें 17 सर्ग हैं जिनमें प्रथम आठ सर्गों को ही कालिदास रचित माना गया है, शेष सर्ग कथापूर्ति के लिये परवर्ती कवि के द्वारा लिखे गये हैं। इस तथ्य के पीछे भाव, भाषा, शैली, व्याकरण और छन्द सम्बन्धी दोष कारण माने गये हैं। मल्लिनाथ ने आठ सर्गों पर ही अपनी टीका लिखी है, जिसमें अष्टम सर्ग की टीका दोषपूर्ण है। अतः अष्टम सर्ग की टीका मल्लिनाथ की नहीं मानी जाती है। लघुत्रयी में परिगणित इस महाकाव्य के 17 सर्गों में कालिदास ने हिमालय-वर्णन, हिमालय-मैना विवाह, पार्वती-जन्म, शिव-पार्वती विवाह की नारद द्वारा चर्चा, ताड़कासुर से पीड़ित देवों का ब्रह्मा के पास जाना, स्कन्द द्वारा ताड़कासुर के वध का उपाय ब्रह्मा द्वारा बताया जाना, शिव की तपस्या भंग करना, रति-विलाप, पार्वती द्वारा घोर तप करना, शिव की वरयात्रा, पार्वती-परिणय, दाम्पत्य जीवन, विहार, स्कन्द (कुमार) जन्म, कुमार का सेनापति बनना, ताड़कासुर वध आदि की कथा वर्णित है।

रघुवंश–

महाकवि कालिदास विरचित रघुवंश महाकाव्य में 19 सर्ग हैं जिनमें सूर्यवंशी 31 राजाओं के जीवन का वर्णन है। इस महाकाव्य में कालिदास ने रघुवंशी राजाओं के गुणों, राजा दिलीप का सपत्नीक वसिष्ठ-आश्रम में जाना, नन्दिनी की सेवा, सन्तानलाभ के लिये वरप्राप्ति, रघु-जन्म, अज-इन्दुमती विवाह, अज-विलाप, दशरथ का मृगया वर्णन, शाप-प्राप्ति, पुत्रेष्टियज्ञ, रामादि चारों पुत्रों का जन्म, सीता-स्वयंवर, रामादि का विवाह, राम-वनवास, सीता-हरण, रावण-वध, राम का राज्याभिषेक, सीता-परित्याग, कुश-लव का जन्म, कुश का राज्याभिषेक एवं विवाह, कुश का स्वर्गवास, कुश के पुत्र अतिथि का राज्याभिषेक, अतिथि तथा उसके वंशज 21 अन्य राजाओं का वर्णन, अग्निवर्ण की कामुकता, उसकी मृत्यु आदि का वर्णन

किया है। इनमें दिलीप, रघु, अज, दशरथ और राम के जीवन का विशद् वर्णन तथा शेष अन्य राजाओं के जीवन का संक्षिप्त वर्णन महाकवि द्वारा किया गया है। आप रघुवंश महाकाव्य की कथा का विस्तृत अध्ययन इकाई 5 में करेंगे।

3.2.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

महाकवि कालिदास की शैली में दुरूहता में सुबोधता, काव्य में नाटकीयता, नैसर्गिक सुषमा में सालंकारता, सरलता में सरसता, सहज भावाभिव्यक्ति में कल्पना की बहुलता और श्रृंगार में भी करुण रस की प्रतीति जैसे विरोधी गुणों का समन्वय मिलता है। भाषा-सौष्ठव भावों की मनोरम अभिव्यक्ति, अलंकार-योजना, प्रकृति के आन्तरिक एवं बाह्य रूप का चित्रण, रस-योजना आदि महाकवि कालिदास की शैलीगत विशिष्टतायें हैं।

कालिदास ललित भावों के कवि हैं। उन्होंने रघुवंश के अज-विलाप में दम्पति के सुन्दर सम्बन्धों और समन्वयात्मक सम्पर्क की अभिव्यक्ति का वर्णन किया है। अज के लिये इन्दुमती का वियोग उसका सर्वस्वहरण है। ऐसे दुर्लभ दाम्पत्य प्रेम का वर्णन कालिदास ने अपने काव्य में किया है–

गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ।
करुण विमुखेन मृत्युना हरता त्वां वद किं न मे हृतम्।।

(रघुवंश–8/67)

महाकवि कालिदास रससिद्ध कवि हैं। उनके काव्यों में श्रृंगार, हास्य, करुण, वीरादि रसों का सुन्दर समन्वय है। कालिदास श्रृंगार के सम्भोग तथा विप्रलम्भ दोनों पक्षों के प्रयोग में सिद्धहस्त थे। उन्होंने 'कुमारसम्भव' के अष्टम सर्ग में सम्भोग श्रृंगार का मनोरम चित्रण किया है–

चुम्बनेष्वधरदानवर्जितं खिन्नहस्तसद्योपगूहनम्।
क्लिष्टमन्मथमपि प्रियं प्रभोर्दुर्लभप्रतिकृतं वधूरतम्।।

(कुमारसम्भव–8/2)

महाकवि कालिदास ने 'कुमारसम्भव' के रति-विलाप एवं 'रघुवंश' के अज-विलाप में करुण रस को उसकी चरमावस्था तक पहुँचा दिया है। अज-विलाप के इस श्लोक में करुण रस की स्पष्ट झलक देखी जा सकती है–

धृतिरस्तमिता रतिश्च्युता विरतं गेयमृतुर्निरुत्सवः।
गतमाभरणप्रयोजनं परिशून्यं शयनीयमद्य मे।।

(रघुवंश–8/66)

महाकवि कालिदास ने उपमा, उत्प्रेक्षा, यमक, रूपक, श्लेष, अर्थान्तरन्यास, दीपक, दृष्टान्त, निदर्शना, व्यतिरेक, विभावना आदि अलंकारों का प्रयोग किया है। उपमा उनका प्रिय अलंकार है। उनकी उपमायें असाधारण और मनोरम हैं। वे दीपशिखा की उपमा मात्र से **'दीपशिखा कालिदास'** हो गये। रघुवंश के इन्दुमती स्वयंवर के वर्णन के प्रसंग में महाकवि ने इन्दुमती की उपमा संचारिणी दीपशिखा से दी है–

संचारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीताय पतिंवरा सा।
नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः ।।

(रघुवंश–6/67)

महाकवि ने अपने काव्य में छोटे और गेय छन्दों का बहुलता से प्रयोग किया है। उपजाति उनका प्रिय छन्द है जिसका प्रयोग रघुवंश और कुमारसम्भव के विभिन्न सर्गों में किया गया है। इसके अतिरिक्त अनुष्टुप्, वंशस्थ, रथोद्धता, वियोगिनी, द्रुतविलम्बित, मालिनी, मन्दाक्रान्ता, वसन्ततिलका, हरिणी आदि छन्दों का प्रयोग भी मिलता है।

बोध प्रश्न 1

1. निम्नलिखित में से कालिदास रचित महाकाव्य है–

   (अ) बुद्धचरित (ब) रघुवंश

   (स) शिशुपालवध (द) नैषधीयचरित

2. महाकवि कालिदास का प्रिय अलंकार है–

   (अ) रूपक (ब) उत्प्रेक्षा

   (स) श्लेष (द) उपमा

3. नीचे दिये गये कथनों में से सत्य (√) तथा असत्य (×) कथन का चयन कीजिये।

   i) रति-विलाप का प्रसंग कुमारसम्भव महाकाव्य में है– ( )

   ii) कालिदास का प्रिय छन्द मालिनी है– ( )

   iii) कालिदास का समय प्रथम शताब्दी ई॰ पू॰ माना जा सकता है– ( )

4. लघुत्रयी के अन्तर्गत कौन-कौन सी रचनायें हैं?

   ....

   ....

अभ्यास प्रश्न 1

1. कालिदास की कृतियों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत कीजिये।

3.3 अश्वघोष

अश्वघोष महान् धर्मप्रचारक, दार्शनिक तथा उच्चकोटि के विद्वान् थे। यहाँ आप अश्वघोष के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व और शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे।

3.3.1 जीवन-वृत्त

महाकवि अश्वघोष की रचनाओं से यह ज्ञात होता है कि वह साकेत अर्थात् अयोध्या के निवासी थे। उनकी माता का नाम सुवर्णाक्षी था। ये बौद्ध भिक्षु तथा आचार्य थे जिन्हें भदन्त महाकवि तथा महावादी भी कहा जाता था। ये जन्मना ब्राह्मण थे बाद में बौद्ध धर्म में दीक्षित होकर उन्होंने सुदूर प्रदेशों की यात्रा की तथा बौद्ध धर्म का प्रचार-प्रसार किया।

अश्वघोष का काल कुषाण शासक कनिष्क के समकालीन था। चीनी परम्परा में अश्वघोष को कनिष्क का आध्यात्मिक उपदेशक तथा चरक को उनका राजवैद्य कहा गया है। बुद्धचरित तथा सौन्दरानन्द में अश्वघोष ने शुद्धोदन के व्यक्तित्व तथा शासन-व्यवस्था के वर्णन में कनिष्क के व्यक्तित्व तथ शासन-व्यवस्था की झाँकी दी है। शारिपुत्रप्रकरण की पाण्डुलिपि से भी यह सिद्ध होता है कि अश्वघोष कनिष्क के समकालीन थे। भारतीय विद्वान् कनिष्क का समय प्रथम शताब्दी ई॰ पू॰ मानते हैं। अतः इस आधार पर अश्वघोष का काल भी प्रथम शताब्दी ई॰ पू॰ माना जा सकता है।

3.3.2 कर्तृत्व

अश्वघोष के नाम से अनेक रचनायें प्रसिद्ध हैं जिनमें बुद्धचरित, सौन्दरानन्द, शारिपुत्र-प्रकरण, सूत्रालंकार, राष्ट्रपाल, वज्रसूची आदि रचनायें परिगणित हैं। इनमें बुद्धचरित 28 सर्गों का एक महाकाव्य है जिसमें सिद्धार्थ-जन्म, अभिनिष्क्रमण, बुद्धत्व प्राप्ति, धर्मचक्रप्रवर्तन, महापरिनिर्वाण, स्तूप-निर्माण आदि की कथा निबद्ध है। सौन्दरानन्द के 18 सर्गों में नन्द और सुन्दरी की कथा निबद्ध है जिनमें गौतम बुद्ध का जन्म, बुद्धत्व-प्राप्ति, नन्द-सुन्दरी विवाह, बुद्ध का नन्द को दीक्षा देना, स्वर्ग-दर्शन, चार आर्यसत्य, नन्द को अमृतत्व प्राप्ति आदि विषय वर्णित हैं।

3.3.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

अश्वघोष वैदर्भी रीति के कवि हैं। उनकी शैली में प्रसाद और माधुर्य गुण का बाहुल्य है। शुद्धोदन की आत्मशुद्धि वर्णन, यशोधरा की चिन्ता, नन्द-सुन्दरी के चकवा-चकवी के तुल्य अतुलनीय प्रेम जैसे अनेक प्रसंगों में भावों की सुन्दर अभिव्यक्ति है। उन्होंने शृंगार के दोनों पक्षों का मनोरम चित्रण किया है। नन्द-सुन्दरी के अनुराग-वर्णन में जहाँ सम्भोग शृंगार अपने चरम में पहुँच जाता है तो वहीं सुन्दरी विलाप के प्रसंग में विप्रलम्भ शृंगार की छटा देखते ही बनती है। इस प्रकार अश्वघोष ने अपने काव्यों में शृंगार, करुण, हास्य, अद्भुत आदि रसों का सुन्दर समन्वय किया है। उनके काव्यों में अनुप्रास, यमक रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास, वक्रोक्ति आदि अलंकारों का प्रयोग मिलता है। अश्वघोष कपिलवस्तु की समृद्धि को मालोपमा का आश्रय लेकर वर्णित करते हैं–

सन्निधानमिवार्थानामाधानमिव तेजसाम्।
निकेतमिव विद्यानां सङ्केतमिव सम्पदाम्।।

(सौन्दरानन्द–1/53)

अश्वघोष का प्रिय छन्द अनुष्टुप् और उपजाति है। उनके महाकाव्यों के अधिकांश सर्गों में उपजाति छन्द का प्रयोग हुआ है। सर्गान्त के श्लोकों में वंशस्थ, शिखरिणी, मन्दाक्रान्ता, शार्दूलविक्रीडित आदि छन्दों का प्रयोग हुआ है।

3.4 भारवि

किरातार्जुनीयम् महाकाव्य के प्रणेता के रूप में भारवि का संस्कृत साहित्य में मूर्धन्य स्थान है। यहाँ हम भारवि के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व एवं शैलीगत विशेषताओं का अध्ययन करेंगे।

3.4.1 जीवन-वृत्त

कालिदासादि महाकवियों के समान भारवि का जीवन-वृत्त भी अप्राप्त है। 'अविन्तसुन्दरीकथा' के अनुसार भारवि, दण्डी के प्रपितामह थे तथा उनका वास्तविक नाम 'दामोदर' था। भारवि के पिता का नाम 'नारायणस्वामी' था। दामोदर ने भारवि के माध्यम से राजा विष्णुवर्द्धन से सम्पर्क किया जहाँ भारवि को 'महाशैव' कहा गया। प्रायः सभी विद्वान् भारवि को दक्षिणात्य मानते हैं।

भारवि का काल निर्धारण बहिरंग प्रमाणों पर ही आधारित है। ऐहोल शिलालेख में रविकीर्ति ने स्वयं को कालिदास और भारवि की कीर्ति का आश्रय लेने वाला कहा है। अतः स्पष्ट है कि भारवि उस काल तक पर्याप्त प्रसिद्ध हो चुके थे। उन्होंने चालुक्यवंशी राजा विष्णुवर्द्धन के काल में 'किरातार्जुनीय' की रचना की थी। काशिकाकार वामन-जयादित्य ने अपनी

टीका में 'किरातार्जुनीय' से उदाहरण दिये हैं तथा बाणभट्ट की रचना में भारवि का उल्लेख नहीं मिलता है। अतः उपरोक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारवि का काल लगभग 560 ई. से 630 ई. के मध्य रहा होगा।

3.4.2 कर्तृत्व

भारवि की एकमात्र उपलब्ध कृति 'किरातार्जुनीय' है, जो बृहत्त्रयी में परिगणित है। इसकी कथा महाभारत के वन-पर्व से गृहीत है। इस महाकाव्य के 18 सर्गों में भारवि ने दुर्योधन की प्रजापालन नीति, युधिष्ठिर-भीम संवाद, शरद-वर्णन, हिमालय-वर्णन, अर्जुन की तपस्या, सायंकाल, चन्द्रोदय, सुरत-वर्णन, वर्षा-वर्णन, इन्द्र-अर्जुन संवाद, किरात वेषधारी शिव का आगमन, चित्रयुद्ध, बाहुयुद्ध, अर्जुन को पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति आदि की कथा का विस्तृत वर्णन है।

किरातार्जुनीय महाकाव्य में प्रकृति-वर्णन, क्रीडा-वर्णन, युद्धादि के वर्णन द्वारा मुख्य कथानक का विस्तार किया गया है। इस महाकाव्य का प्रारम्भ 'श्री' शब्द से होता है तथा प्रत्येक सर्ग के अन्त में 'लक्ष्मी' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका नायक अर्जुन है तथा वीर अंगीरस है।

3.4.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

महाकवि भारवि के काव्य में भाषा, भाव, काव्य-सौन्दर्य, रस-योजना, वर्णन-वैचित्र्य, अलंकार-योजना, छन्द-योजना आदि तत्त्वों का सुन्दर निदर्शन है। भारवि ने अर्थगौरव, कल्पना और सूक्ष्म विचारों का सम्मिश्रण किया है। उनके अनुसार पदों में स्पष्टता, अर्थगौरव-युक्तता, अपुनरुक्तदोष और साकांक्षता गुण अनिवार्य है–

स्फुटता न पदैरपाकृता न च न स्वीकृतमर्थगौरवम्।
रचिता पृथगर्थता गिरा न च सामर्थ्यमपोहितं क्वचित्।।

(किरातार्जुनीय–2/27)

भारवि के काव्य में श्रृंगार और वीर रस का बाहुल्य है किन्तु उनके काव्य का अंगीरस वीर ही है। किरातार्जुनीय में 8वें और 9वें सर्ग में सम्भोग श्रृंगार का तथा 13वें-17वें सर्ग तक वीर रस का सुन्दर प्रयोग मिलता है। करुण, हास्य, अद्भुत, आदि रस गौण रूप में यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होते हैं। वीर रस का एक उदाहरण देखिये–

हृता गुणैरस्य भयेन वा मुनेस्तिरोहिताः स्वित् प्रहरन्ति देवताः।
कथं न्वमीसंत्तमस्य सायका भवन्त्यनेके जलधैरिवोर्मयः।।

(किरातार्जुनीय–14/61)

भारवि के काव्य में अलंकारों का स्वाभाविक तथा परिश्रमसाध्य प्रयोग प्रचुर मात्रा में मिलता है। प्रयत्नसाध्य अलंकारों में चित्रालंकार तथा यमक प्रमुख हैं। चित्रालंकार का एक उदाहरण प्रस्तुत है–

न नोननुन्नो नुन्नोनो नाना नानानना ननु।
नुन्नोऽनुन्नो ननुन्नेनो नानेना नुन्ननुन्ननुत् ।।

(किरातार्जुनीय–15/14)

उनके द्वारा प्रयुक्त उपमाओं में सौन्दर्य, स्वास्थ्य, सरसता, पाण्डित्य, औचित्यादि गुणों का सुन्दर समन्वय दृष्टिगोचर होता है। अपनी उपमाओं के कारण ही भारवि को **'आतपत्र**

भारवि' कहा गया है। इसके अतिरिक्त उत्प्रेक्षा, रूपक, अतिशयोक्ति, अर्थान्तरन्यास, श्लेष, समासोक्ति, अर्थापत्ति, विरोधाभासादि अलंकारों को भी महाकवि ने अपने काव्य में स्थान दिया है। उनका प्रिय छन्द वंशस्थ है। भारवि ने मुख्यतः 13 छन्दों का प्रयोग किया है। क्षेमेन्द्र ने 'सुवृत्ततिलक' में भारवि के वंशस्थ छन्द की प्रशंसा की है। वंशस्थ के अतिरिक्त भारवि उपजाति, द्रुतलिम्बित, अनुष्टुप्, वियोगिता, पुष्पिताग्रा आदि छन्दों के प्रयोग में भी कुशल थे।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि महाकवि भारवि का वैदुष्य व्यापक था। उनको वेद, दर्शन, नीति, राजनीति, पुराण, ज्योतिष, काव्यशास्त्र, नाट्यशास्त्र आदि का पर्याप्त ज्ञान था जिसके परिणामस्वरूप उनके विषय में **'भारवेरर्थगौरवम्', 'नारिकेलफलसम्मितंवचो भारवेः', 'भारवेरिव भारवेः', प्रकृति मधुरा भारविगिरः'** जैसी उक्तियाँ प्रचलित हुई।

बोध प्रश्न 2

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये–

   (i) अश्वघोष की माता का नाम .... था।

   (ii) बुद्धचरित महाकाव्य में .... सर्ग हैं।

   (iii) अश्वघोष का प्रिय छन्द .... और .... है।

   (iv) किरातार्जुनीय .... की रचना है।

   (v) किरातार्जुनीय महाकाव्य में अंगीरस .... है।

2. अश्वघोष की कृतियों के नाम लिखिये?

   ....

   ....

3. क्षेमेन्द्र ने भारवि के किस छन्द की प्रशंसा की है?

   ....

   ....

अभ्यास प्रश्न 2

1. अश्वघोष के जीवन-वृत्त के विषय में दस पंक्तियाँ लिखिये।
2. भारवि के शैलीगत वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिये।

3.5 माघ

शिशुपालवध महाकाव्य के प्रणेता महाकवि माघ संस्कृत साहित्य के उद्भट विद्वान् महाकवि थे। यहाँ आप माघ के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व तथा शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे।

3.5.1 जीवन-वृत्त

शिशुपालवध के पाँच श्लोकों में माघ के जीवन-वृत्त से सम्बन्धित कुछ तथ्य मिलते हैं जिनके आधार पर यह ज्ञात होता है कि वे श्रीभिन्नमाल या श्रीमाल के निवासी थे। उनके पितामह का नाम सुप्रभदेव तथा पिता का नाम दत्तक था। ये जन्मना ब्राह्मण थे तथा व्याकरण, दर्शन, ज्योतिष, आयुर्वेद, राजनीति, पुराण, इतिहासादि विषयों के ज्ञाता थे।

माघ के काल के विषय में अनेक तथ्य दिये गये हैं। उनके पितामह सुप्रभदेव राजा वर्मलात के उत्तराधिकारी थे जिनका 'वसन्तगढ़ शिलालेख' प्राप्त होता है जो 682 संवत् का है। इस आधार पर माघ का काल 675 ई0 के अनन्तर माना जा सकता है। वामन ने 'काव्यालंकारसूत्रवृत्ति' में नृपतुंग ने कन्नड़ ग्रन्थ 'कविराजमार्ग' में, माघ को कालिदास का समकक्ष माना है। आनन्दवर्धन ने 'ध्वन्यालोक' में तथा सोमदेव ने 'यशस्तिलकचम्पू' में माघ का उल्लेख किया है। अतः यह स्पष्ट है कि माघ का समय 800 ई0 से 700 ई0 के बीच माना जा सकता है।

3.5.2 कर्तृत्व

बृहत्त्रयी में परिगणित शिशुपालवध महाकाव्य महाकवि माघ की एकमात्र कृति है जिसमें 20 सर्ग हैं। इस महाकाव्य की कथा महाभारत के सभा-पर्व से ली गयी है। इस महाकाव्य में देवर्षिनारद द्वारा इन्द्र का सन्देश श्रीकृष्ण को पहुँचाया जाना, कृष्ण का राजसूययज्ञ में सेना सहित भाग लेना, श्रीकृष्ण का इन्द्रप्रस्थ के लिए प्रस्थान, रैवतक-पर्वत वर्णन, षड्ऋतु-वर्णन, वन-विहार, जलक्रीडा, सन्ध्या, चन्द्रोदय आदि प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन श्रीकृष्ण और पाण्डवों का मिलन, युधिष्ठिर द्वारा राजसूय यज्ञ का प्रस्ताव, श्रीकृष्ण की पूजा, शिशुपाल का कोप, युद्ध तथा शिशुपाल के वध की कथा वर्णित है।

3.5.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

महाकवि माघ ने कालिदास से काव्य-सौन्दर्य, भारवि से अर्थगौरव और भट्टि से व्याकरणपटुता के गुणों को गृहीत कर अपने काव्य को अलंकृत किया है। माघ में कल्पना की ऊँची उड़ान, भावों में अनुभूति का समन्वय और विचारों में चिन्तन का आधार प्राप्त होता है। कहीं भावगाम्भीर्य, तो कहीं शास्त्रीय उपमाओं के कारण उनके काव्य में दुरूहता अनुभव की जाती है। शिशुपालवध का अंगीरस वीर है तथा श्रृंगार रस भी अंगी के तुल्य हो गया है। उन्होंने मुख्यतया श्रृंगार के सम्भोग पक्ष का ही वर्णन किया है। युद्धभूमि के वर्णन में महाकवि ने वीर रस का सुन्दर प्रयोग किया है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

रोदोरन्ध्रं व्यश्नुवानानि लोलैरङ्गस्यान्तर्मापितः स्थावराणि।
केचिद् गुर्वमित्य संयन्निषद्यां क्रीणन्ति स्म प्राणमूल्यैर्यशांसि।।

(शिशुपालवध–18 / 15)

माघ के काव्य में जहाँ उपमा, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, अर्थान्तरन्यास, यमक, श्लेष, रूपक, विरोधाभास, दृष्टान्त, दीपक आदि अलंकारों का प्रयोग है तो वहीं रीति मार्ग का अनुसरण करते हुये चित्रालंकारों में कहीं एकाक्षर, कहीं द्वयाक्षरपादश्लोक, कहीं गोमूत्रिकाबन्ध, कहीं मुरजबन्ध, कहीं चक्रबन्ध आदि का प्रयोग महाकवि ने किया है। दो वर्णों वाला एक श्लोक उदाहरण के रूप में उद्धृत है–

विभावि विभवी भाभो विभाभावी विवो विभीः।
भवाभिभावी भावावो भवाभावो भुवो विभुः ।।

(शिशुपालवध–19 / 86)

माघ की उपमाओं में शास्त्रीय पाण्डित्य, सूक्ष्म दृष्टि और गम्भीर चिन्तन की स्पष्ट झलक दिखायी देती है। रैवतक पर्वत पर सूर्योदय के दृश्य के समय माघ द्वारा दी गयी उपमा के परिणामस्वरूप उन्हें घण्टामाघ कहा गया–

उदयति विततोर्ध्व-रश्मि-रज्जा-वहिमरुचौ हिमाधाग्नि याति चास्ताम्।
वहति गिरिरयं विलम्बि-घण्टा-द्वय-परिवारित-वारणेन्द्र-लीलाम्।।

(शिशुपालवध—4 / 20)

माघ ने छन्दों के चयन में प्रवीणता का प्रदर्शन किया है। भावगाम्भीर्य तथा चित्रालंकारों के प्रयोग में अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त उनके काव्य में वंशस्थ, उपजाति, वसन्ततिलका, द्रुतविलम्बित, मालिनी, पुष्पिताग्रा, वैतालीय, रुचिरा आदि छन्दों का प्रयोग है।

इस प्रकार अपनी वर्णन-चातुरी, भाषा-सौष्ठव, उपमा, अर्थगौरव, पदलालित्य, भावाभिव्यक्ति, विविध विषयों के ज्ञान आदि विशेषताओं के कारण **'माघे सन्ति त्रयो गुणाः'**, **'तावद्भाभारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः'**, **'माघे विघ्नोत्साहानोत्सहन्ते पदक्रमे'** जैसी प्रशस्तियाँ महाकवि माघ के वैशिष्ट्य को प्रदर्शित करती हैं।

3.6 श्रीहर्ष

इस इकाई के अन्तर्गत आपने संस्कृत साहित्य के प्रमुख महाकवियों यथा कालिदास, अश्वघोष, भारवि और माघ के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व एवं शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन किया। इसी क्रम में अब आप श्रीहर्ष के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व एवं शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे।

3.6.1 जीवन-वृत्त

भारवि और माघ के पश्चात् संस्कृत के महाकवियों में श्रीहर्ष का नाम प्रमुख है। नैषधीयचरित के अनुसार श्रीहर्ष के पिता का नाम श्रीहीर तथा माता का नाम मामल्लदेवी था। कानपुर नरेश जयचन्द उनके आश्रयदाता थे। कश्मीर के उद्भट विद्वानों ने इनके ग्रन्थों की प्रशंसा की है।

श्रीहर्ष के काल के विषय में सर्वप्रथम ब्यूलर ने प्रकाश डाला है। राजशेखर सूरि कृत 'प्रबन्धकोष' के आधार पर उन्होंने अपना मत प्रकट किया है। इस तथ्य के अनुसार श्रीहर्ष कान्यकुब्ज नरेश जयन्तचन्द्र के आश्रित कवि थे। जयन्तचन्द्र, कुमारपाल का समकालीन था। 1163 ई0 से 1174 ई0 तक जयन्तचन्द्र और कुमारपाल का काल माना जाता है। अतः इस आधार पर ब्यूलर ने नैषधीयचरित की रचना का काल 1163-1174 के मध्य माना। इस प्रकार श्रीहर्ष का काल 12वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध माना जा सकता है।

3.6.2 कर्तृत्व

श्रीहर्ष विरचित एकमात्र उपलब्ध ग्रन्थ नैषधीयचरित है जिसमें 22 सर्ग हैं। इसका कथानक महाभारत के वनपर्व से गृहीत है। इस महाकाव्य में मुख्यतः नल-दमयन्ती के प्रणय और परिणय का वर्णन है। दमयन्ती के गुणों को सुनकर नल का उसकी ओर आकृष्ट होना, वन विहार, हंस को पकड़ना, हंस-विलाप, नल के आग्रह पर हंस का कुण्डिनपुर जाना, दमयन्ती की नल के प्रति अनुरक्ति, दमयन्ती का नख-शिख वर्णन, नल-दमयन्ती वार्तालाप, स्वयंवर वर्णन, विवाह संस्कार, कामक्रीड़ा, देवस्तुति, सूर्योदय, चन्द्रोदय आदि के विस्तृत वर्णन के साथ महाकवि ने अन्त में कवि-वृत्त का भी वर्णन किया है, जिससे उनके जीवन-वृत्त के विषय में पर्याप्त जानकारी मिलती है।

नैषधीयचरित के सर्गान्त के श्लोकों में श्रीहर्ष ने स्वयं को स्थैर्यविचारप्रकरण, श्रीविजयप्रशस्ति, खण्डनखण्डखाद्य, शिवशक्तिसिद्धि, नवसाहसांकचरित आदि ग्रन्थों का प्रणेता भी बताया है।

3.6.3 शैलीगत वैशिष्ट्य

श्रीहर्ष संस्कृत साहित्य के मूर्धन्य महाकवियों में एक हैं। उन्होंने सुकुमार मार्ग की सरसता तथा विचित्र मार्ग की प्रौढ़ता का समन्वय करके नैषधीयचरित महाकाव्य की रचना की । पदलालित्य, स्वरमाधुर्य, प्रसाद एवं ओज गुण, वैदर्भी और गौडी रीति, उत्प्रेक्षादि अलंकारों का सुन्दर प्रयोग श्रीहर्ष के काव्य की विशेषतायें हैं। श्रीहर्ष की भाषा में माधुर्य, लयात्मकता, भावबोध, संगीतात्मकता, ध्वन्यात्मकता आदि के दर्शन होते हैं। उनमें भावाभिव्यक्ति की अपूर्व क्षमता है। यद्यपि उनके भावों में गाम्भीर्य है किन्तु अभिव्यक्ति के साथ उनके सौन्दर्य में द्विगुणित वृद्धि होती है। एक उदाहरण देखिए–

यदस्य यात्रासु बलोद्धतं रजः स्फुरत्प्रतापानलधूममञ्जिम।
तदेव गत्वा पतितं सुधाम्बुधौ दधाति पङ्कीभवदङ्कतां विधौ।।

(नैषधीयचरित–1 / 8)

नैषधीयचरित का अंगीरस शृंगार है। श्रीहर्ष ने स्वयं अपने काव्य के लिये **शृङ्गारभङ्गया'** (1 / 145) तथा **'शृङ्गारमृतशीतगुः'** (11 / 130) का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त वीर, करुण, हास्य, अद्भुत् आदि रस गौण हैं। महाकवि ने शृंगार के सम्भोग और विप्रलम्भ दोनों पक्षों का वर्णन किया है। शृंगार के सम्भोग पक्ष का एक उदाहरण देखिये–

वल्लभस्य भुजयोः स्मरोत्सवेदित्सतोः प्रसभमङ्कपालिकाम्।
एककश्चिरमरोधि बालया तल्पयन्त्रणनिरन्तरालया।।

(नैषधीयचरित–18 / 43)

इसके अतिरिक्त हंस-विलाप में करुण रस तथा सोलहवें सर्ग में बारात गये लोगों के भोजन-व्यापार के वर्णन में शृंगार पर आश्रित हास्य रस का प्रयोग मिलता है।

श्रीहर्ष की भाषा अलंकारयुक्त है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, यमक, श्लेष अतिशयोक्ति, व्यतिरेक, विरोधाभास, विभावना आदि अलंकारों का प्रयोग महाकवि ने किया है। उत्प्रेक्षा और अतिशयोक्ति अलंकार श्रीहर्ष को नितान्त प्रिय हैं। दमयन्ती के मुख की रचना के प्रसंग में उत्प्रेक्षा के प्रयोग का एक उदाहरण प्रस्तुत है–

हृतसारमिवेन्दुमण्डलं, दमयन्तीवदनाय वेधसा।
कृतमध्यबिलं विलोक्यते, धृतगम्भीरखनीखनीलिम्।।

(नैषधीयचरित–2 / 25)

छन्दयोजना में भी श्रीहर्ष ने उत्कृष्ट कौशल का प्रदर्शन किया है। उन्होंने हरिणी, शार्दूलविक्रीडित, मन्दाक्रान्ता, स्रग्धरा, अनुष्टुप्, वसन्ततिलका, द्रुतविलम्बित, वैतालीय, उपजाति आदि छन्दों के प्रयोग द्वारा अपने काव्य को लयात्मकता प्रदान की है।

बोध प्रश्न 3

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये–

   i) सोमदेव ने .... में माघ का उल्लेख किया है।

   ii) शिशुपालवध महाकाव्य की कथा महाभारत के .... पर्व से ली गयी है।

(iii) श्रीहर्ष के पिता का नाम .... तथा माता का नाम .... था।

(iv) शिशुपालवध में .... सर्ग हैं।

(v) नैषधीयचरित का अंगीरस .... है।

2. **निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तरों पर सही (√) का चिह्न लगाइयेः—**

i)	माघ के पितामह का नाम था—	दत्तक / सुप्रभदेव
ii)	माघ की कृति है—	नैषधीयचरित / शिशुपालवध
iii)	रैवतक पर्वत का वर्णन है—	किरातार्जुनीय / शिशुपालवध
iv)	नैषधीयचरित में सर्ग हैं—	22 / 20
v)	नैषधीयचरित का कथानक ग्रहीत है—	विराट पर्व / वन पर्व

अभ्यास प्रश्न 3

1. माघ के जीवन-वृत्त को दस वाक्यों में लिखिये।

2. नैषधीयचरित महाकाव्य का अंगीरस श्रृंगार है। स्पष्ट कीजिये।

3.7 अन्य महाकवि

कालिदासादि महाकवियों के समान भट्टि, कुमारदास, रत्नाकर, हरिचन्द्र, कविराज, क्षेमेन्द्र, मंखक, पद्मगुप्त, विल्हण, कल्हण आदि कवियों ने भी अपनी रचनाओं द्वारा संस्कृत साहित्य के अक्षय कोश में पर्याप्त वृद्धि की। यहाँ आप भट्टि, कुमारदास और रत्नाकर कवि के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व एवं शैलीगत वैशिष्ट्य के विषय में अध्ययन करेंगे।

3.7.1 भट्टि

महाकवि भट्टि अपने समय के उद्भट विद्वान् थे। इनके जीवन से सम्बद्ध दो सूचनायें प्राप्त होती हैं। पहली सूचना के अनुसार उन्होंने (वलभी) गुजरात में अपने ग्रन्थ 'रावणवध' की रचना की जहाँ श्रीधरसेन नामक राजा राज्य करते थे (रावणवध—22 / 35) सम्भव है कि श्रीधरसेन की प्रार्थना पर भट्टि कवि ने ऐसे काव्य की रचना की जो व्याकरण तथा अलंकार की शिक्षा के लिये उपयुक्त हो। वलभी में श्रीधरसेन नाम के चार राजाओं का वर्णन मिलता है जो 500 ई0 से 641 ई0 के मध्य थे। भट्टि किस श्रीधरसेन के आश्रित थे, इसके स्पष्टीकरण के लिये दूसरी सूचना का आश्रय लेना पड़ता है। श्रीधरसेन द्वितीय का 610 ई0 का एक शिलालेख प्राप्त होता है जिसमें भट्टि नाम के किसी व्यक्ति को राजा द्वारा भूमि दिये जाने की चर्चा है। यदि उसी व्यक्ति को भट्टि कवि माना जाये तो इनका समय छठीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध (550 ई0-610 ई0) माना जा सकता है।

'रावणवध' भट्टि कवि की एकमात्र उपलब्ध रचना है। यह रचना 'भट्टिकाव्य' के नाम से भी प्रसिद्ध है। इस महाकाव्य में 22 सर्ग तक 1624 श्लोक हैं जिसमें रामजन्म से लेकर राम के राज्याभिषेक तक की कथा निबद्ध है। स्वरूप की दृष्टि से यह काव्य चार काण्डों में विभक्त है, जो इस प्रकार हैं— (1) प्रकीर्णकाण्ड (2) अधिकार-काण्ड (3) प्रसन्नकाण्ड (4) तिङन्तकाण्ड।

इस काव्य के अध्ययन से पाठकों को एक ओर जहाँ आनन्द की प्राप्ति होती है तो वहीं दूसरी ओर व्याकरण के नियमों की पर्याप्त जानकारी भी मिलती है। भट्टि कवि ने

व्याकरणमूलक काव्यशैली की एक नवीन विधा को जन्म दिया है। व्याकरण के ज्ञान के लिये भट्टिकाव्य दीपक के समान है—

दीपतुल्यः प्रबन्धोऽयं शब्दलक्षणचक्षुषम्।
हस्तामर्ष इवान्धानां भवेद् व्याकरणदृते।।

(रावणवध— 22/33)

भट्टिकाव्य के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि यदि उनके काव्य में एक स्थान पर कठोरता है तो दूसरे स्थान पर नितान्त सरसता। यदि कहीं व्याकरण के जटिल प्रयोग हैं तो वहीं दूसरी ओर अलंकारों के सुन्दर प्रयोग। भाषासम, भावगाम्भीर्य, मनोवैज्ञानिकता, अलंकारिक प्रयोग, व्याकरणात्मक प्रयोग आदि भट्टिकाव्य की विशेषतायें हैं जो भट्टिकवि के व्याकरणिक एवं साहित्यिक ज्ञान का बोध कराती हैं।

3.7.2 कुमारदास

कुमारदास के जन्मस्थान के विषय में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है। प्राप्त प्रमाणों में अधिकांश प्रमाण इन्हें लंका का निवासी स्वीकार करते हैं। लंका में कुमारदास नाम का एक राजा हुआ है जिसका समय 517-526 ई0 माना जाता है। 'जानकीहरण' में कालिदास का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। काशिका (650 ई0) में जिन विशेष अर्थों में कुछ शब्दों का प्रयोग किया गया है, उन्हीं अर्थों में जानकीहरण में भी उन शब्दों के प्रयोग मिलते हैं। अतः कुमारदास का समय 650 ई0 के बाद ही माना जा सकता है। वामन (800 ई0) के आचार्य ने कुमारदास के 'खलु' शब्द के प्रयोग की निन्दा की है। इस आधार पर कुमारदास को वामन का पूर्ववर्ती माना जा सकता है। अतः कुमारदास का जन्म 650-750 ई0 के मध्य मानना चाहिये।

कुमारदास की एकमात्र रचना 'जानकीहरण' महाकाव्य ही प्राप्त है। इसमें 20 सर्ग थे। इनका पूरा ग्रन्थ अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है। इस ग्रन्थ के प्रथम प्रकाशित संस्करण में 10 सर्गों में जानकीहरण तक की कथा वर्णित है। दूसरे प्रकाशित संस्करण में 11वें सर्ग से 15वें सर्ग के 22 श्लोकों तक के वर्णन का अंश मिलता है। इसके 20 सर्गों में अयोध्या, दशरथ एवं उनकी रानियों का वर्णन, रामादि का जन्म, ताड़कावध, रामादि का विश्वामित्र के साथ जनकपुरगमन, राम और सीता का विवाह, अयोध्यागमन, रामवनगमन, सीताहरण, बालिवध, लंकादहन, युद्धवर्णन और अन्ततः राम की विजय की कथा वर्णित है।

कुमारदास की रचना में जहाँ एक ओर भारवि की रचना के समान अर्थगाम्भीर्य और भावगाम्भीर्य है तो वहीं दूसरी ओर कालिदास के समान कोमल-कान्त-पदावली, वैदर्भी रीति, भाषा में सरलता, सरसता, प्रवाह और प्रांजलता भी है। कुमारदास पर कालिदास का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। जानकीहरण में रघुवंश महाकाव्य की पदावली तथा वाक्य संरचना का स्पष्ट प्रभाव यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होता है। उनके भावों में सहृदयता और सुकुमारता सर्वत्र व्याप्त है। उन्होंने अनुप्रास, यमक, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों के साथ-साथ चित्रालंकारों का प्रयोग कर भारवि की अलंकृत काव्यशैली को भी अपनाया है। इस प्रकार जानकीहरण महाकाव्य में शब्द-सौष्ठव, छन्दयोजना, ओज-प्रसाद और माधुर्य गुण का सम्मिलित प्रयोग, सुन्दर कल्पनायें, सरल-सरस पदावली के साथ-साथ दीर्घ समासयुक्त पदावली का प्रयोग कवि कुमारदास की प्रतिभा का परिचायक है। कुमारदास के इन्हीं गुणों से मुग्ध होकर राजशेखर ने यहाँ तक कह दिया कि रघुवंश (1. ग्रन्थ, 2. राम) के रहते हुये जानकीहरण (1. ग्रन्थ, 2. सीताहरण) करने का साहस केवल दो ही व्यक्तियों में हैं एक कुमारदास और दूसरा रावण—

जानकीहरणं कर्तुं रघुवंशे स्थिते सति।
कविः कुमारदासश्च रावणश्च यदि श्रमः।।

3.7.3 रत्नाकर

संस्कृत साहित्य के क्षेत्र में रत्नाकर भी एक प्रसिद्ध कवि हैं। कश्मीर इनकी जन्मभूमि थी। इनके पिता का नाम अमृतभानु था। ये कश्मीर नरेश चिप्पट जयापीड (799-813 ई0) के आश्रित कवि थे। रत्नाकर कवि को अवन्तिवर्मा के शासनकाल में ख्याति प्राप्त हुई। अवन्तिवर्मा का काल 855 ई0 के लगभग माना जाता है। अतः इस आधार पर रत्नाकर कवि का काल 800-860 ई0 के मध्य मानना चाहिये।

रत्नाकर कवि का प्रमुख ग्रन्थ 'हरविजय' है। यह संस्कृत साहित्य का सबसे बड़ा महाकाव्य है। इसमें 50 सर्ग तथा 4321 श्लोक हैं जिसमें शिव से अन्धकासुर का जन्म तथा उसके संहार की कथा निहित है। रत्नाकर ने अपने काव्य को 'चन्द्रार्धचूडचरिताश्रयचारु' कहा है तथा भारवि और माघ के समान अपने महाकाव्य के प्रत्येक सर्ग के अन्त में 'रत्न' शब्द का प्रयोग किया है।

रत्नाकर रीतिवादी कवि हैं। उन्होंने माघ के तुल्य अपने काव्य में चित्रकला, संगीत और नृत्यकला का शास्त्रानुकूल विश्लेषण किया है। उनके अनुसार उनके इस ग्रन्थ में प्रसाद, माधुर्य, ओज, श्लेष, यमक, पदलालित्य, भाषा-सौष्ठव, भावगाम्भीर्य आदि सबकुछ है जिसको प्राप्त कर न केवल राजा में अपितु बृहस्पति के चित्त में भी शंका उत्पन्न हो जाती है–

ललितमधुराः सालङ्काराः प्रसादमनोहरा विकटयमकश्लेषोद्गारप्रबन्धनिरर्गलाः।
असदृशमतीश्चित्रे मार्गे मयोद्गिरतो गिरो न खलु नृपते चेतो वाचस्पतेरपि शङ्कते।।

हरविजय महाकाव्य अलंकृत पद्धति का अन्तिम ग्रन्थ है; भारवि और माघ द्वारा प्रवर्तित शैली आगे नहीं जा सकी। रत्नाकार ने इस ग्रन्थ में प्रतिज्ञा ली है कि इसे पढ़ने वाला अकवि भी कवि बन जाता है तथा कवि क्रमशः महाकवि हो जाता है–

हरविजय-महाकवेः प्रतिज्ञां, शृणुत मम प्रबन्धे।
शिशुरकविः कविः प्रभावाद् भवति कविश्च महाकविः क्रमेणः।।

बोध प्रश्न 4

1. निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तर पर सही (√) का चिह्न लगाइयेः–

(i)	भट्टि कवि की रचना है–	बुद्धचरित / रावणवध
(ii)	कुमारदास निवासी थे –	लंका / कश्मीर
(iii)	व्याकरणमूलक काव्यशैली की नवीन विधा का सृजन किया–	भट्टि / रत्नाकर
(iv)	जानकीहरण महाकाव्य में सर्ग हैं–	10 / 20
(v)	संस्कृत साहित्य का सबसे बड़ा महाकाव्य है–	हरविजय / रावणवध

2. 'रावणवध' महाकाव्य में कितने काण्ड हैं? उनके नाम लिखिये।

....

....

अभ्यास प्रश्न 3

1. निम्नलिखित कवियों के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व एवं शैलीगत वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालियेः–

   i) भट्टि

   ii) कुमारदास

   iii) रत्नाकर

3.8 सारांश

इस इकाई में आपने संस्कृत साहित्य के महाकवियों यथा कालिदास, अश्वघोष, भारवि, माघ, श्रीहर्ष, भट्टि, कुमारदास तथा रत्नाकर कवि के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व तथा शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन किया। महाकवि कालिदास का संस्कृत साहित्य में विशिष्ट स्थान है। उनकी सात रचनायें प्राप्त होती हैं जिनमें कुमारसम्भव और रघुवंश महाकाव्य हैं। अश्वघोष ने बुद्धचरित एवं सौन्दरानन्द महाकाव्य का प्रणयन किया। भारवि, माघ और श्रीहर्ष ने क्रमशः किरातार्जुनीय, शिशुपालवध और नैषधीयचरित की रचना कर संस्कृत साहित्य को समृद्ध बनाया। इनमें किरातार्जुनीय और नैषधीयचरित महाकाव्य का कथानक महाभारत के वन-पर्व से तथा शिशुपालवध महाकाव्य का कथानक महाभारत के सभा-पर्व से लिया गया है। इन महाकवियों का शैलीगत वैशिष्ट्य अधोलिखित कथन से स्पष्ट किया जा सकता है–

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः।।

इस प्रकार कालिदास उपमा-प्रयोग के लिये, भारवि अर्थगौरव के लिये तथा दण्डी पदलालित्य के लिये प्रसिद्ध थे किन्तु माघ में कालिदास के समान सुन्दर उपमा-प्रयोग ही नहीं, अपितु भारवि के तुल्य अर्थगौरव और दण्डी के तुल्य पद-लालित्य भी है। महाकाव्य लेखन के क्रम में भट्टि कवि ने 'रावणवध', कुमारदास ने 'जानकीहरण' तथा रत्नाकर कवि ने संस्कृत साहित्य के विशालतम महाकाव्य 'हरविजय' का प्रणयन किया।

3.9 शब्दावली

किंवदन्ती – समाज में चली आ रही बातें अथवा जानकारी।

बाहुल्य – अधिकता।

सपत्नीक – पत्नी के साथ।

धर्मप्रचारक – धर्म का प्रचार करने वाला।

उपदेशक – उपदेश देने वाला।

दक्षिणात्य – दक्षिण का निवासी

दृष्टिगोचर – दिखायी पड़ना

नारिकेल – नारियल

प्रणेता – रचयिता

ख्याति – प्रसिद्धि

प्रस्थान	–	गमन
व्याकरणपटुता	–	व्याकरण में निपुणता
उद्‌भट	–	प्रकाण्ड

3.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास – बलदेव उपाध्याय, शारदा मन्दिर, वाराणसी।
2. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास – कपिलदेव, द्विवेदी, रामनारायणलाल विजयकुमार, कटरा, इलाहाबाद।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास – डॉ. उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', चौखम्बा भारती अकादमी, वाराणसी।

3.11 बोध /अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) (ब) रघुवंश
2) (द) उपमा
3) (i) सत्य (ii) असत्य (iii) सत्य
4) रघुवंश, कुमारसम्भव, मेघदूतम्।

बोध प्रश्न 2

1) (i) सुवर्णाक्षी (ii) 28 (iii) अनुष्टुप्, उपजाति (iv) भारवि (v) वीर
2) बुद्धचरित, सौन्दरनन्द, शारिपुत्रप्रकरण, सूत्रालंकार आदि।
3) वंशस्थ छन्द।

बोध प्रश्न 3

1) (i) यशस्तिलकचम्पू (ii) सभापर्व (iii) श्रीहीर, मामल्लदेवी
   (iv) 20 सर्ग (v) शृंगार
2) (i) सुप्रभदेव (ii) शिशुपालवध
   (iii) शिशुपालवध (iv) 22 (v) वन-पर्व

बोध प्रश्न 4

1) (i) रावणवध (ii) लंका (iii) भट्टि
   (iv) 20 (v) हरविजय
2) रावणवध महाकाव्य में चार काण्ड हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं–
   (i) प्रकीर्णकाण्ड (ii) अधिकार-काण्ड (iii) प्रसन्नकाण्ड
   (iv) तिङ्न्तकाण्ड

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

इकाई 4 प्रमुख कवियों का परिचय : जयदेव, भर्तृहरि, अमरुक तथा अन्य

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप–

- भर्तृहरि, जयदेव, अमरुक तथा पण्डितराज जगन्नाथ के जीवन-वृत्त के विषय में जान सकेंगे।
- भर्तृहरि की रचनाओं नीतिशतक, श्रृंगारशतक और वैराग्यशतक का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- गीतगोविन्द तथा रतिमंजरी में वर्णित वर्ण्य-विषय को समझ सकेंगे।
- अमरुक कवि प्रणीत अमरुकशतक गीतिकाव्य का परिचय प्राप्त करेंगे।
- पण्डितराज जगन्नाथ की विविध रचनाओं जैसे– गंगालहरी, करुणालहरी, आसफविलास, रसंगगाधर आदि से परिचित होंगे।

- भर्तृहरि, जयदेव, अमरुक तथा पण्डितराज जगन्नाथ के शैलीगत वैशिष्ट्य को बता सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों में आपने महाकाव्य और खण्डकाव्य (गीतिकाव्य) की उत्पत्ति एवं उसके विकास की परम्परा का अध्ययन किया। इसके साथ ही आपने संस्कृत साहित्य के प्रमुख महाकवियों जैसे– कालिदास, भारवि, माघ आदि के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व तथा शैलीगत वैशिष्ट्य का परिचय प्राप्त किया।

उसी क्रम में इस इकाई में आप संस्कृत साहित्य के प्रमुख कवियों भर्तृहरि, जयदेव, अमरुक तथा पण्डितराज जगन्नाथ के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व एवं शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे। भर्तृहरि मुक्तक काव्य परम्परा के अग्रणी कवि हैं। इनकी रचनाओं के प्रत्येक श्लोक अपने आप में पूर्ण हैं। भर्तृहरि के पश्चात् जयदेव, अमरुक, पण्डितराज जगन्नाथ ने भी गीतिकाव्य की परम्परा का अनुसरण करते हुये काव्य रचना की। जयदेव प्रणीत गीतगोविन्द आज भी भक्तों के अन्तःस्थल में भक्ति की भावना का संचार कर रहा है। इन कवियों ने अपनी रचनाओं में सरल, सरस और प्रभावपूर्ण भाषा-शैली को स्थान दिया है। इनके काव्य में दुरूहता का नितान्त अभाव है। इस इकाई के माध्यम से आपको इन कवियों के कालक्रम, जीवन-परिचय, रचनाओं और उनकी भाषाशैली को समझने में सरलता होगी।

4.2 भर्तृहरि

भर्तृहरि का नाम संस्कृत साहित्य में एक महान् कवि के रूप में लिया जाता है । संस्कृत साहित्य के इतिहास में भर्तृहरि एक नीतिकार के रूप में प्रसिद्ध हैं । इनकी रचनाओं को शतकत्रय के नाम से जाना जाता है। जिनमें नीतिशतक, श्रृंगारशतक एवं वैराग्यशतक शामिल हैं। इन शतकत्रय की उपदेशात्मक कहानियाँ भारतीय जनमानस को विशेष रूप से प्रभावित करती हैं। प्रत्येक शतक में सौ-सौ श्लोक हैं। बाद में इन्होंने गुरू गोरखनाथ का शिष्य बनकर वैराग्य धारण कर लिया था। इसलिये इनका एक लोकप्रचलित नाम बाबा भरथरी भी है।

4.2.1 जीवन-वृत्त

भर्तृहरि ने अपने जीवन के विषय में कहीं कोई संकेत नहीं दिया है अतः इनके आविर्भाव काल के सम्बन्ध में पर्याप्त मतभेद है। इनकी जीवनी विविधताओं से परिपूर्ण है। राजा भर्तृहरि ने भी अपने काव्य में अपने समय का निर्देश नहीं किया है। अतएव दन्तकथाओं, लोकगाथाओं तथा अन्य सामग्रियों के आधार पर इनका जो जीवन-परिचय उपलब्ध है वह इस प्रकार है–

एक परम्परा के अनुसार भर्तृहरि विक्रमसंवत् के प्रवर्तक के अग्रज माने जाते हैं। विक्रम संवत् ई0 सन् से 56 वर्ष पूर्व प्रारम्भ होता है। जो विक्रमादित्य के प्रौढ़ावस्था का समय रहा होगा। ऐसा माना जाता है कि भर्तृहरि विक्रमादित्य के अग्रज थे। अतः इनका समय कुछ और पहले का रहा होगा। विक्रमसंवत् के प्रारम्भ के विषय में भी विद्वान् एक मत नहीं हैं। कुछ लोग ई0 सन् 78 और कुछ लोग ई० सन् 544 से इसका प्रारम्भ मानते हैं। ये दोनों मत भी अग्राह्य प्रतीत होते हैं। फारसी ग्रन्थ 'कलितौ दिमनः' में पंचतन्त्र का एक पद्य "शशिदिवाकरयोर्ग्रहपीडनम्" का भाव उद्धृत है। पंचतन्त्र अनेक ग्रन्थों के पद्यों का संकलन है। सम्भवतः पंचतन्त्र में इसे नीतिशतक से ग्रहण किया गया होगा। फारसी ग्रन्थ 579 ई०

से 581 ई० के एक फारसी शासक द्वारा रचित था। इसलिए राजा भर्तृहरि अनुमानतः 550 ई० से पूर्व हम लोगों के बीच रहे होंगे। भर्तृहरि उज्जयिनी के राजा थे । ये "विक्रमादित्य" उपाधि धारण करने वाले चन्द्रगुप्त द्वितीय के बड़े भाई थे । इनके पिता का नाम चन्द्रसेन था । पत्नी का नाम पिंगला था, जिसे वे अत्यन्त प्रेम करते थे । इन्होंने मनोरम और रसपूर्ण भाषा में नीति, वैराग्य तथा श्रृंगार जैसे गूढ़ विषयों पर शतक-काव्य लिखे हैं । इस शतकत्रय के अतिरिक्त, वाक्यपदीय नामक एक उच्च श्रेणी का व्याकरण ग्रन्थ भी इनके नाम पर प्रसिद्ध है । कुछ लोग भट्टिकाव्य के रचयिता भट्टि से भी उनका ऐक्य मानते हैं। ऐसा कहा जाता है कि नाथपंथ के वैराग्य नामक उपपंथ के प्रवर्तक भर्तृहरि ही थे । चीनी यात्री इत्सिंग के अनुसार इन्होंने बौद्ध धर्म ग्रहण किया था परन्तु अन्य सूत्रों के अनुसार ये अद्वैत वेदान्ताचार्य थे । चीनी यात्री इत्सिंग के यात्रा विवरण से यह ज्ञात होता है कि 651 ई0 में भर्तृहरि नामक एक वैयाकरण की मृत्यु हुई थी । इस प्रकार इनका समय सातवीं शताब्दी का प्रतीत होता है परन्तु भारतीय पुराणों में इनके सम्बन्ध में उल्लेख होने से संकेत मिलता है कि इत्सिंग द्वारा वर्णित भर्तृहरि कोई अन्य रहे होंगे ।

4.2.2 कर्तृत्व

इनकी रचनाओं को मुख्य रूप से शतकत्रय के नाम से जाना जाता है, जिनमें श्रृंगारशतक, नीतिशतक एवं वैराग्यशतक शामिल हैं। वाक्यपदीय को भी इनकी रचना माना जाता है।

श्रृंगारशतक– इसमें श्रृंगार सम्बन्धी सौ श्लोक हैं । इसमें कवि ने रमणियों के सौन्दर्य का तथा उनके पुरुषों को आकृष्ट करने वाले श्रृंगारमय हाव-भावों का चित्रण किया है । इस शतक में कवि ने स्त्रियों के हाव-भाव, प्रकार, उनका आकर्षण एवं उनके शारीरिक सौष्ठव के बारे में विस्तार से चर्चा की है । कवि का कहना है कि इन्द्र आदि देवताओं को भी अपने कटाक्षों से विचलित करने वाली रमणियों को अबला मानना उचित नहीं है। नारी अपने आकर्षक हाव-भावों से मानव मन को आकृष्ट करके बाँध लेती है – **"समस्तभावैः खलु बन्धनं स्त्रियः"**। इसके अतिरिक्त भर्तृहरि ने अपने शतक में वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त व शिशिर ऋतु में स्त्री व स्त्री प्रसंग का अत्यधिक श्रृंगारिक (कामुक) वर्णन किया है । वास्तव में इस शतक में सांसारिक भोग और वैराग्य इन दो विकल्पों के मध्य अनिश्चय की मनोवृत्ति का चित्रण हुआ है, जो वैराग्यशतक में पहुँचकर निश्चयात्मक बन जाती है । इसका मंगलाचरण कामदेव को समर्पित है ।

नीतिशतक– इसमें नीति सम्बन्धी सौ श्लोक हैं । नीतिशतक में भर्तृहरि ने अपने अनुभवों के आधार पर लोकव्यवहार पर आश्रित नीतिसम्बन्धी श्लोकों का संग्रह किया है । एक ओर तो उन्होंने अज्ञता, लोभ, धन, दुर्जनता, अहंकार आदि की निन्दा की है तो दूसरी ओर विद्या, सज्जनता, उदारता, स्वाभिमान, सहनशीलता, सत्य आदि गुणों की प्रशंसा भी की है । नीतिशतक के श्लोक संस्कृत विद्वानों में ही नहीं अपितु सभी भारतीय भाषाओं में समय-समय पर सूक्ति रूप में उद्धृत किये जाते रहे हैं। संस्कृत विद्वान् और टीकाकार भूधेन्द्र ने नीतिशतक को अनेक भागों में विभक्त किया है, जिन्हें 'पद्धति' कहा गया है । जिनमें मूर्खपद्धति, विद्वत्पद्धति, मान-शौर्य-पद्धति, अर्थपद्धति, दुर्जनपद्धति, सुजनपद्धति, परोपकारपद्धति, धैर्यपद्धति, दैवपद्धति, कर्मपद्धति आदि शामिल हैं । इसका मंगलाचरण ब्रह्म को समर्पित है।

वैराग्यशतक– इसमें वैराग्य सम्बन्धी सौ श्लोक हैं। तृष्णादूषणम्, विषयपरित्याग-विडम्बना, याञ्चा-दैन्यदूषणम्, भोगास्थैर्यवर्णनम्, कालमहिमा, यति-नृपति-सम्भाषणम्, मनःसम्बोधन-नियमनम्, नित्यानित्यविचारः, शिवार्चनम्, अवधूतचर्या आदि इसके विषयवस्तु में शामिल हैं । भर्तृहरि ने इस ग्रन्थ में संसार की असारता और वैराग्य के महत्त्व का प्रतिपादन किया है। इस शतक में काव्य-प्रतिभा और दार्शनिकता का अद्भुत समन्वय किया गया है। इसमें सांसारिक

आकर्षणों और भोगों के प्रति उदासीनता के उभरते हुये भावों का चित्रण दिखायी देता है । कवि की तो यही कामना है कि किसी पुण्यमय अरण्य में शिव-शिव का उच्चारण करते हुये उसका समय बीतता जाये ।

वाक्यपदीय– शतकत्रय के अतिरिक्त वाक्यपदीय भी इनकी रचना मानी जाती है । यह संस्कृत व्याकरण का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसे 'त्रिकाण्डी' भी कहते हैं । वाक्यपदीय, व्याकरण शृंखला का मुख्य दार्शनिक ग्रन्थ है । वाक्यपदीय में भर्तृहरि ने भाषा (वाच्) की प्रकृति और उसका बाह्य जगत् से सम्बन्ध पर अपने विचार व्यक्त किये हैं । यह ग्रन्थ तीन भागों में विभक्त है जिन्हें 'काण्ड' कहते हैं । यह समस्त ग्रन्थ पद्य में लिखा गया है । प्रथम 'ब्रह्मकाण्ड' है जिसमें 157 कारिकाएँ हैं, दूसरा 'वाक्यकाण्ड' है जिसमें 493 कारिकाएँ हैं और तीसरा 'पदकाण्ड' के नाम से प्रसिद्ध है जिसमें 450 कारिकाएँ हैं । इसका प्रथम काण्ड ब्रह्मकाण्ड है जिसमें शब्द की प्रकृति की व्याख्या की गयी है । इसमें शब्द को ब्रह्म माना गया है और ब्रह्म की प्राप्ति के लिये शब्द को प्रमुख साधन बताया गया है। दूसरे काण्ड में वाक्य के विषय में भर्तृहरि ने विभिन्न मत रखे हैं । तीसरे काण्ड में अन्य दार्शनिक रीतियों के विषयों, जैसे – जाति, द्रव्य, काल आदि की चर्चा की गयी है । इसमें भर्तृहरि यह दिखाने का प्रयास करते हैं कि विविध मत, एक ही वस्तु के अलग-अलग आयामों को प्रकाशित करते हैं । इस प्रकार वे सभी दर्शनों को अपने व्याकरण आधारित दर्शन द्वारा एकीकृत करने का प्रयास कर रहे हैं । वाक्यपदीय पर भूतिराज के पुत्र हेलाराज ने बहुत सुन्दर तथा विस्तृत टीका लिखी है । आधुनिक समय में भी कुछ विद्वानों ने टीका लिखी है किन्तु इन सबकी दृष्टि आगमिक न होने के कारण वाक्यपदीय का वास्तविक ज्ञान नहीं प्राप्त होता । इसकी बहुत सी कारिकाएँ नष्ट हुई मालूम होतीं हैं । युधिष्ठिर मीमांसक तथा साधूराम ने लुप्त कारिकाओं पर कुछ विचार किए हैं । व्याकरण के आगमिक रूप के विचार में इस ग्रन्थ के समान अन्य ग्रन्थ बहुत नहीं हैं ।

4.2.3 शैली

भर्तृहरि मुक्तक काव्य परम्परा के अग्रणी कवि हैं। इनकी कृतियों में प्रसाद और माधुर्य गुण का सुन्दर प्रयोग मिलता है। पद्य सरल, सुबोध और मनोहर हैं। प्रत्येक पद्य स्वयं में पूर्ण है। भर्तृहरि को जीवन के सभी पक्षों का गहरा अनुभव प्राप्त था। उनके वर्णन अत्यन्त हृदयग्राही और प्रभावोत्पादक हैं। उनके ग्रन्थों में भाव और भाषा का सुन्दर समावेश है। भाषा का लालित्य, भावों की गहराई, रसों का सुन्दर प्रयोग, अलंकारों और छन्दों का सुन्दर प्रयोग उनके पद्यों को अत्यन्त सरस बना देता है। उनके काव्य में आदर्शवादी व्यक्ति के लिए शिक्षाप्रद नीतिश्लोक है; शृंगार में रुचि रखने वाले शृंगारी व्यक्ति के लिये शृंगार रस से परिपूर्ण ग्रन्थ शृंगारशतक है और ईश्वर आराधना में तल्लीन भक्त के लिये वैराग्य के श्लोक हैं। इस प्रकार भर्तृहरि के तीनों शतक सभी प्रकार के पाठकों के चित्त को अपनी ओर आकृष्ट करने में सफल हैं। उनके शतकों में संस्कृत कवित्व के सुन्दरतम रूप की छटा दृष्टिगोचर होती है। उनके ग्रन्थों में आचारशिक्षा, नीतिशिक्षा, सज्जन-प्रशंसा, दुर्जन-निन्दा, शृंगार रस की सर्वप्रियता, संसार की नश्वरता, भक्ति की उपादेयता जैसे अनेक विषय वर्णित हैं। भर्तृहरि के द्वारा रचित अनेक श्लोक सुभाषित और मुहावरे के रूप में संस्कृत साहित्य में प्रचलित हैं।

भर्तृहरि के काव्य में शृंगार और शान्त रस का सुन्दर प्रयोग मिलता है। अलंकारों के प्रयोग के विषय में यदि बात की जाये तो उन्होंने उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, यमक, समुच्चय, दृष्टान्त, निदर्शना, परिसंख्या, अर्थान्तरन्यास, प्रतिवस्तूपमा, अन्योक्ति आदि अलंकारों का सुन्दर प्रयोग किया है, किन्तु कालिदास के समान भर्तृहरि को भी निदर्शना अलंकार अत्यन्त प्रिय है। एक उदाहरण देखिये–

व्यालं बालमृणालतन्तुभिरसौ रोद्धुं समुज्जृम्भते
भेत्तुं वज्रमणिं शिरीषकुसुमप्रान्तेन सन्नह्यते।
माधुर्यं मधुविन्दुना रचयितुं क्षाराम्बुधेरीहते
मूर्खान्यः प्रतिनेतुमिच्छति बलात्सूक्तैः सुधास्यन्दिभिः।।

(नीतिशतक–6)

यहाँ हाथी को मृणाल से बाँधना, शिरीष से हीरे को बेधना, मधु की बूँद से समुद्र को मीठा करना, काव्य सूक्ति से मूर्खों को प्रसन्न करना – इस अप्रस्तुत अर्थ के साथ असम्भव उपमा की कल्पना की गयी है, अतः निदर्शना अलंकार है।

भर्तृहरि के छन्दों में भी बड़ा लालित्य है। उनके ग्रन्थों में विविध छन्दों के प्रयोग को देखा जा सकता है। उन्होंने शिखरिणी, वसन्ततिलका, हरिणी, मन्दाक्रान्ता, शार्दूलविक्रीडित, मालिनी, स्रग्धरा, वंशस्थ आदि छन्दों को अपने काव्य में स्थान दिया है किन्तु उनका सर्वाधिक प्रिय छन्द शार्दूलविक्रीडित है।

4.3 जयदेव

जयदेव संस्कृत साहित्य के महाकवि हैं जिन्होंने गीतगोविन्द और रतिमंजरी की रचना की। जयदेव, उत्कल राज्य यानि ओडिशा के गजपति राजाओं के समकालीन थे । जयदेव एक वैष्णव भक्त थे तथा ये सन्त के रूप में सम्मानित थे ।

4.3.1 जीवन-वृत्त

जयदेव का जन्म भुवनेश्वर के समीप केन्दुबिल्व नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम भोजदेव तथा माता का नाम रमादेवी या राधादेवी था। पद्‌मावती नाम की कन्या के साथ इनका विवाह हुआ था। इनकी पत्नी पद्‌मावती संगीतज्ञ थीं तथा जयदेव के गान पर ताल का अनुसरण करते हुये नृत्य करती थीं (पद्‌मावतीचरणचारणचक्रवर्ती, गीतगोविन्द–1/2) 12वीं शताब्दी ई0 के उत्तरार्द्ध में बंगाल के राजा लक्ष्मणसेन की राजसभा में कई कवि तथा विद्वान् रहते थे। उनमें जयदेव का भी स्थान था, जयदेव के अतिरिक्त उमापतिधर, गोवर्धन, शरणदेव तथा धोयी भी राजा लक्ष्मणसेन के आश्रित कवि थे। इन कवियों का उल्लेख जयदेव ने अपनी कृति गीतगोविन्द में किया है। इन विद्वानों में गीतगोविन्द की रचना के कारण जयदेव की ख्याति सर्वाधिक थी।

लक्ष्मणसेन के एक शिलालेख पर 1116 ई0 की तिथि है, अतः जयदेव ने इसी समय में गीतगोविन्द की रचना की होगी। इस आधार पर जयदेव का समय 1100 ई0 के लगभग मानना चाहिये। कुछ विद्वानों का मत था कि जयदेव बंगाल के राजा के सभाकवि थे, परन्तु शिलालेख और प्राचीन मन्दिर जो ओडिशा में मौजूद है, उससे यह प्रामाणित होता है कि जयदेव जगन्नाथ के भक्त थे और उत्कल राज्य के वासी थे। आज भी ओडिसी नृत्य के माध्यम से गीतगोविन्द सर्वजन प्रिय हो रहा है। ओडिशी नृत्य ही जयदेव का ओडिशा प्रान्त का होना सुनिश्चित करता है। उनके गीतगोविन्द काव्य का प्रचार-प्रसार पड़ोसी राज्यों आन्ध्र-प्रदेश, तमिलनाडु तथा कर्नाटक में भी हुआ। तत्पश्चात् उत्तर भारत में खासतौर पर राजस्थान में मीराबाई के द्वारा गीतगोविन्द का प्रचार-प्रसार हुआ। गुरु ग्रन्थ साहिब में भी गीतगोविन्द के प्रणेता भगत जयदेव का नामोल्लेख है।

4.3.2 कर्तृत्व

गीतगोविन्द एवं रतिमञ्जरी नामक इनकी दो रचनाएं हैं । गीतगोविन्द एक गीतिकाव्य है। गीतगोविन्द में श्रीकृष्ण की गोपिकाओं के साथ रासलीला, राधाविषाद वर्णन, कृष्ण के लिए व्याकुलता, उपालम्भ वचन, कृष्ण की राधा के लिए उत्कण्ठा, राधा की सखी द्वारा राधा के विरह सन्ताप का वर्णन है । 'श्री गीतगोविन्द' संस्कृत साहित्य जगत् में एक अनुपम कृति है। इसकी मनोरम रचना-शैली, भावप्रवणता, सुमधुर राग-रागिणी, धार्मिक तात्पर्यता तथा सुमधुर कोमल-कान्त-पदावली साहित्यिक रस पिपासुओं को अपूर्व आनन्द प्रदान करती है। अतः डॉ० ए० बी० कीथ ने अपने 'संस्कृत साहित्य के इतिहास' में इसे 'अप्रतिम काव्य' माना है। सन् 1784 में विलियम जोन्स द्वारा लिखित तथा 1799 में एसियाटिक रिसर्चेज, खण्ड-3 में प्रकाशित 'ऑन द म्यूजिकल मोड्स ऑफ द हिन्दूज' पुस्तक में गीतगोविन्द को 'पास्टोरल ड्रामा' अर्थात् 'गोपनाट्य' के रूप में माना गया है। उसके बाद सन् 1837 में फ्रेंच विद्वान् एडविन आरनोल्ड तार्सन ने इसे 'लिरिकल ड्रामा' या 'गीतिनाट्य' कहा है। वान श्रोडर ने 'यात्रा प्रबन्ध' तथा पिशेल लेवी ने 'मेलो ड्रामा', इन्साइक्लोपिडिया ब्रिटानिका (खण्ड-5) में गीतगोविन्द को 'धर्मनाटक' कहा गया है । इसी तरह अनेक विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से इसके सम्बन्ध में विचार व्यक्त किए हैं । जर्मन कवि गेटे महोदय ने अभिज्ञानशाकुन्तलम् और मेघदूतम् के समान ही गीतगोविन्द की भूरि-भूरि प्रशंसा की है । गीतगोविन्द काव्य में जयदेव ने जगदीश का ही जगन्नाथ, दशावतारी, हरि, मुरारी, मधुरिपु, केशव, माधव, कृष्ण इत्यादि नामों से उल्लेख किया है । इस ग्रन्थ में 24 प्रबन्ध, 12 सर्ग तथा 72 श्लोक (सर्वांगसुन्दरी टीका में 77 श्लोक) हैं । इसमें राधा-कृष्ण के मिलन-विरह तथा पुनर्मिलन को कोमल तथा लालित्यपूर्ण पदों द्वारा बाँधा गया है। किन्तु नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'हस्तलिखित संस्कृत ग्रन्थ सूची, भाग-इ' में गीतगोविन्द का 13वाँ सर्ग भी उपलब्ध है । परन्तु यह मातृका अर्वाचीन प्रतीत होती है ।

गीतगोविन्द वैष्णव सम्प्रदाय में अत्यधिक आदृत है । अतः 13वीं शताब्दी के मध्य से ही श्री जगन्नाथ मन्दिर में इसे नित्य सेवा के रूप में अंगीकार किया जाता रहा है । इस गीतिकाव्य के प्रत्येक प्रबन्ध में कवि ने काव्यफल स्वरूप सुखद, यशस्वी, पुण्यरूप, मोक्षद आदि शब्दों का प्रयोग करके इसके धार्मिक तथा दार्शनिक काव्य होने का भी परिचय दिया है । शृंगार रस वर्णन में जयदेव कालिदास की परम्परा में आते हैं । गीतगोविन्द का रास वर्णन श्रीमद्भागवत के वर्णन से साम्य रखता है तथा श्रीमद्भागवत के स्कन्ध 10, अध्याय 40 में (10-40-1722) अक्रूर स्तुति में जो दशावतार का वर्णन है, गीतगोविन्द के प्रथम सर्ग के स्तुति वर्णन से साम्य रखता है । आगे चलकर गीतगोविन्द के अनेक 'अनुकृति' काव्य रचे गये ।

गीतगोविन्द की लोकप्रियता और सौष्ठव के कारण भारत की प्रत्येक भाषा में गद्य और पद्य में तथा अंग्रेजी, लैटिन, फ्रेंच, जर्मन, अरबी, फारसी आदि भाषाओं में इसका अनुवाद किया गया है । इसके अलावा संस्कृत भाषा में इसके जो अनुवाद, भाष्य, टीका और टिप्पणी लिखे गये हैं, वैसा किसी अन्य भाषा में मिलना असम्भव है । किसी टीकाकार ने इसका शृंगार प्रधान काव्य के रूप में वर्णन किया है तो किसी ने भक्ति सम्प्रदाय को महत्त्व देकर इसे भक्ति काव्य माना है तो किसी ने संगीत को प्रधानता देकर इसे संगीत शास्त्र का रूप दिया है एवं किसी-किसी टीकाकार ने शब्द, माधुर्य और सौष्ठव को लेकर इसकी शब्द व्युत्पत्त्यात्मक व्याख्या की है। इसलिए निस्सन्देह गीतगोविन्द एक सर्वतन्त्र स्वतन्त्र ग्रन्थ है। गीतगोविन्द के प्रथम टीकाकार उदयनाचार्य ने 'भावविभाविनी' टीका लिखी है। जगन्नाथपुरी के अत्यन्त निकट प्राची के किनारे रहने वाले उदयनाचार्य जयदेव के प्रिय मित्र तथा प्रशंसक थे। सन् 1170 से 1198 के मध्य में 'भावविभाविनी' टीका लिखी गयी थी, जिसमें

100 श्लोक हैं । इसकी तीन मातृकाएँ उदयपुर और नागपुर में उपलब्ध हैं ।

'गीतगोविन्द' काव्य में बारह सर्ग हैं, जिनका चौबीस प्रबन्धों (खण्डों) में विभाजन हुआ है। इन प्रबन्धों का उपविभाजन पदों अथवा गीतों में हुआ है। प्रत्येक पद अथवा गीत में आठ पद्य हैं। 1, गीतों के वक्ता कृष्ण, राधा अथवा राधा की सखी हैं। अत्यन्त नैराश्य और निरवधि-वियोग को छोड़कर भारतीय प्रेम के शेष सभी रूपों – अभिलाषा, ईर्ष्या, प्रत्याशा, निराशा, कोप, मान, पुनर्मिलन तथा हर्षोल्लास आदि का बड़ी तन्मयता और कुशलता के साथ वर्णन किया गया है । प्रेम के इन सभी रूपों का वर्णन अत्यन्त रोचक, सरस और सजीव होने के अतिरिक्त इतना सुन्दर है कि ऐसा प्रतीत होता है, मानो कवि शास्त्र, अर्थात् चिन्तन (कामशास्त्र) को भावना का रूप अथवा अमूर्त को मूर्त रूप देकर उसे कविता में परिणित कर रहा है । यहाँ यह उल्लेखनीय है कि विद्वानों ने इस सारे काव्य को 'अप्रस्तुत प्रशंसा' मानकर वाच्यार्थ में छिपे व्यंग्यार्थ को व्यक्त करने का प्रयास स्वीकार किया है । (प्रस्तुत के माध्यम से अप्रस्तुत का अथवा अप्रस्तुत के माध्यम से प्रस्तुत का वर्णन अप्रस्तुत-प्रशंसा अलंकार कहलाता है।) उनके मत के अनुसार श्रीकृष्ण 'जीवों की आत्मा' के प्रतीक हैं। गोपियों की क्रीडा अनेक प्रकार का वह प्रपंच है, जिसमें अज्ञान-अवस्था में फंसी मनुष्यों की आत्मा भटकती रहती है। राधा ब्रह्मानन्द का प्रतीक हैं, जिसे प्राप्त करने पर ही जीवात्मा को चरम सुख की प्राप्ति होती है।

कतिपय विद्वानों के अनुसार जयदेव राधा के उपासक न होकर श्रीकृष्ण के ही उपासक थे। अतः श्रीकृष्ण मनुष्यों की आत्मा के प्रतीक न होकर परमात्मा के प्रतीक हैं। इस तथ्य को वाणी देते हुए आचार्य बलदेव उपाध्याय लिखते हैं ''शृंगार-शिरोमणि श्रीकृष्ण भगवत्-तत्त्व के प्रतिनिधि हैं और उनकी प्रेमी गोपिकाएं जीव की प्रतीक हैं। राधा-कृष्ण का मिलन जीव-ब्रह्म का मिलन है। इस प्रकार साधना मार्ग के अनेक तथ्यों के रहस्य को यहाँ सुलझाया गया है।''

रतिमञ्जरी गीतगोविन्द के रचयिता जयदेव की दूसरी कृति है । यह संस्कृत भाषा में रचित लघु पुस्तिका है जिसमें कामसूत्र का सार संक्षेप प्रस्तुत किया गया है । रीतिकालीन कवियों ने कामसूत्र की मनोहारी झांकियां प्रस्तुत की हैं तो गीतगोविन्द के गायक जयदेव ने अपनी लघु पुस्तिका 'रतिमञ्जरी' में कामसूत्र का सार संक्षेप प्रस्तुत कर अपने काव्य कौशल का अद्भुत परिचय दिया है ।

4.3.3 शैली

'गीतगोविन्द' काव्य का रचना-कौशल इस प्रकार सर्वथा नवीन एवं नितान्त मौलिक है कि उसके काव्य-रूप का निर्णय करना ही दुष्कर बन गया है । कुछ पाश्चात्य विद्वान् इसे 'ग्राम्य-रूपक' (Pastoral Drama) कहते हैं, तो अन्य समीक्षक इसे 'गीतिनाटक' (Lyric Drama) कहते हैं, तो कुछ अन्यों के मत में यह काव्य 'परिष्कृत यात्रा' (Refined yatra) है। पिशेल (Pichel) इस काव्य को 'संगीत रूपक' (Melo Drama) स्वीकार करते हैं । लेवि (Levi) इसे गीत और रूपक का मध्यवर्ती अथवा समन्वित रूप (In Between Song and Drama) मानते हैं, परन्तु जयदेव ने अपनी इस कृति का सर्गों में विभाजन करके इसे नाटक के स्थान पर काव्य मानने की अपनी धारणा की ओर ही संकेत किया है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इस काव्य में नाटक की भाँति अंक, प्रस्तावना आदि कुछ भी नहीं है । कुछ विद्वान् इसे 'शृंगार महाकाव्य' की संज्ञा भी देते हैं । मानवीय सौन्दर्य के चित्रण में प्रकृति को बड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इस सन्दर्भ में 'गीतगोविन्द' काव्य में ऋतुराज वसन्त, चन्द्र-ज्योत्स्ना, सुरभित समीर तथा यमुना तट के मोहक कुंजों का बड़ा ही सुन्दर वर्णन देखने को मिलता है । यहां तक कि इस काव्य में पक्षी तक प्रेम की शक्ति और

महिमा का गान करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं । जयदेव ने इस काव्य में वैदर्भी रीति माधुर्य व्यंजक वर्णों वाली शैली का प्रयोग किया है । काव्य में कहीं-कहीं दीर्घ समासों का प्रयोग अवश्य हुआ है, परन्तु फिर भी दुर्बोधता अथवा क्लिष्टता नहीं आने पायी । वस्तुतः कवि ने विशेष-विशेष उत्सवों पर सर्व-साधारण के गाने के लिए ही तो गीतों की रचना की थी । अतः उन्हें सुबोध रखना आवश्यक ही था । गीतों में न केवल असाधारण स्वाभाविकता (अकृत्रिमता) है, अपितु उनमें अनुपम माधुर्य भी है । 'गीतगोविन्द' की रचना-शैली की प्रशंसा में मैकडॉनल का कथन है" सौन्दर्य में, संगीतमय वचनोपन्यास में और रचना के सौष्ठव में सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में 'गीतगोविन्द' काव्य शैली की उपमा नहीं मिलती । काव्य के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि कवि में कहीं लघु पदों की वेगवती धारा द्वारा, तो कहीं चातुर्य के साथ रचित दीर्घ समासों की लयपूर्ण गति द्वारा अपने पाठकों-श्रोताओं पर यथेष्ट प्रभाव डालने की अद्भुत क्षमता है । कवि नाना छन्दों के प्रयोग में ही सिद्धहस्त नहीं, अपितु चरणों के मध्य और अन्त में तुकात्मकता लाने में भी अद्वितीय है ।"

'गीतगोविन्द' काव्य में जयदेव ने परम्परागत रचना-प्रणाली का अनुसरण न करके सर्वथा नवीन और मौलिक शैली को अपनाया है । श्लोक, गद्य और गीत के मिले-जुले प्रयोग द्वारा काव्य में अनुपम रचना-माधुर्य की सृष्टि हुई है । कवि ने कथा-सूत्र के निर्वाह के लिए अपेक्षित दृश्ययोजना अथवा अवस्था विशेष के चित्रण जैसे वर्णनात्मक प्रसंगों में श्लोकों का प्रयोग किया है । पात्रों की मनोदशा को सूचित करने वाले संवादात्मक प्रसंगों में गद्य का प्रयोग हुआ है तथा भावानुभूति की अभिव्यंजना पद्यों में की गयी है । इस प्रकार 'गीतगोविन्द' में अपनायी गयी अभिनव रचना-प्रणाली में वर्ण, संवाद और गीत परस्पर इस प्रकार गुंथ गये हैं कि उनसे एक विलक्षण आनन्द की अनुभूति होती है । इस अनुपम रचना-शैली के आविष्कर्ता जयदेव, अपने उपमान आप ही हैं । आज के कुछ आलोचक जयदेव पर भक्ति के आलम्बन राधा-कृष्ण को श्रृंगार का आलम्बन बनाने का दोषारोपण करते हैं, परन्तु माधुर्य भाव के उपासक कवि पर यह लांछन अन्यायपूर्ण ही नहीं, अपितु स्वयं उनके अपने अविवेक का द्योतक है । वस्तुतः दाम्पत्य प्रणय में उपलब्ध तन्मयता अथवा तल्लीनता के चरम उत्कर्ष की तथा भेद में अभेद की कल्पना के चूड़ान्त निदर्शन की अभिव्यक्ति ही भक्ति के क्षेत्र में माधुर्य भाव की सृष्टि करती है । मधुर भाव से भजन करने वाले भक्तों के लिए भगवान् की श्रृंगारिक चेष्टाएं, विलास-लीलाएं तथा प्रेम-गाथाएं ही गेय एवं कीर्तनीय हैं ।

'गीतगोविन्द' वस्तुतः एक अनुपम एवं अद्भुत ग्रन्थ है, जिसके उद्दाम-श्रृंगार के अन्तस्थल में रहस्यमयी माधुर्य भावना की निगूढ़ धारा बह रही है । समग्र संस्कृत साहित्य में इस कोटि की मधुर रचना दूसरी कोई नहीं । संस्कृत भारती के सौन्दर्य और माधुर्य की पराकाष्ठा का अवलोकन करना हो, तो 'गीतगोविन्द' का अनुशीलन करना चाहिए । इसके शब्दचित्रों से सौन्दर्य मानो छलकता है । इसके गीतों में पद-लालित्य अलौकिक माधुर्य का संचार करता है । इसके छन्दों का नाद-सौन्दर्य अपूर्व आनन्द प्रदान करता है । शब्द और अर्थ का सामंजस्य ऐसा मनोमुग्धकारी है कि संस्कृत से अपरिचित व्यक्ति भी उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता । इसके समान कोमलकान्त पदावली संसार की किसी भी भाषा के काव्य में दुर्लभ है । इस काव्य में प्रयुक्त दीर्घ समासों में भी विलक्षण प्रसादकता एवं स्वर-माधुर्य है । अनुप्रास के प्रयोग में तो कवि अद्वितीय है । उनके गीतों में अनुप्रास का प्रयोग पदों के अन्त में ही नहीं, मध्य में भी अपनी छटा बिखेरता हुआ चलता है । ललित छन्दों और कोमलकान्त पदावली का ऐसा मणि-कांचन संयोग हुआ है कि गीतों के उच्चारण मात्र से सहृदयों के हृदय में तदनुरूप रस का आविर्भाव एवं संचार होने लगता है। श्रृंगार की व्यंजना के लिए यह अनूठी शैली बड़ी ही सार्थक सिद्ध हुई है । जयदेव ने 'गीतगोविन्द' की रचना करके संस्कृत में एक नवीन रचना-प्रणाली का आविष्कार किया। 'गीतगोविन्द' के

अनुकरण पर संस्कृत में 'अभिनव गीतगोविन्द', 'गीतराघव', 'गीतगंगाधर' तथा 'कृष्णगीत' जैसे अनेक गीत काव्यों की रचना हुई, परन्तु कोई भी कवि अपने काव्य में 'गीतगोविन्द' जैसी उत्कृष्टता लाने में सफल नहीं हुआ । इधर हिन्दी में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने ब्रजभाषा में इसके अनुवाद का प्रयास किया, परन्तु 'सच्ची कविता' का अनुवाद तो हो ही नहीं सकता यह उक्ति 'गीतगोविन्द' के सम्बन्ध में अक्षरशः सत्य सिद्ध हुई है । अतः भक्ति, शृंगार और कवित्व की त्रिवेणीरूप 'गीतगोविन्द' काव्य का कृष्ण-भक्ति साहित्य में उल्लेखनीय महत्त्व है।

बोध प्रश्न 1

1. **निम्नलिखित प्रश्नों में सत्य (√) तथा असत्य (×) की पहचान कीजिये–**
   - i) भर्तृहरि के पिता का नाम चन्द्रसेन था – सत्य ( ) असत्य ( )
   - ii) भर्तृहरि का प्रिय अलंकार उपमा है – सत्य ( ) असत्य ( )
   - iii) गीतगोविन्द में 12 सर्ग हैं – सत्य ( ) असत्य ( )
   - iv) जयदेव ने गीतगोविन्द में गौडी रीति का प्रयोग किया है – सत्य ( ) असत्य ( )
   - v) वाक्यपदीय ग्रन्थ का अपर नाम त्रिकाण्डी है – सत्य ( ) असत्य ( )
2. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये –**
   - i) भर्तृहरि की पत्नी का नाम .... था।
   - ii) वाक्यपदीय ग्रन्थ के प्रणेता .... हैं।
   - iii) .... भर्तृहरि का प्रिय छन्द है।
   - iv) .... गीतगोविन्द गीतिकाव्य के प्रणेता हैं।
   - v) जयदेव का विवाह .... के साथ हुआ था।

अभ्यास प्रश्न 1

1. भर्तृहरि की प्रमुख कृतियों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत कीजिए ।
2. जयदेव की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए ।

4.4 अमरुक

अमरुक या अमरु संस्कृत साहित्य के महान् कवियों में से एक हैं । इनकी रचना अमरुकशतक जगत्प्रसिद्ध है। इनकी कोई अन्य कृति उपलब्ध नहीं है । यह केवल इस एक ही सौ पद्यों वाले अमरुकशतक के माध्यम से सहृदयों के बीच प्रसिद्ध हुए हैं ।

4.4.1 जीवन-वृत्त

अमरुक की कविता जितनी विख्यात है, उनका व्यक्तित्व उतना ही अप्रसिद्ध है । उनके देश और काल का अभी तक ठीक निर्णय नहीं हो पाया है । रविचन्द्र ने 'अमरुकशतकम्' की अपनी टीका के उपोद्घात में आद्य शंकराचार्य को अमरुक से अभिन्न व्यक्ति माना है, परन्तु यह किंवदंती नितान्त निराधार है । आद्य शंकराचार्य के द्वारा किसी 'अमरुक' नामक राजा के मृत शरीर में प्रवेश तथा कामतन्त्र विषयक किसी ग्रन्थ की रचना का उल्लेख शंकरदिग्विजय में अवश्य किया गया है, परन्तु विषय की भिन्नता के कारण 'अमरुकशतक' को शंकराचार्य की रचना मानना नितान्त भ्रान्त है ।

आनन्दवर्धन (9वीं सदी का मध्यकाल) ने अमरुक के मुक्तकों की चमत्कृति तथा प्रसिद्धि का उल्लेख ध्वन्यालोक के तृतीय उद्योत में किया है । इससे इनका समय 9वीं सदी के पहले ही सिद्ध होता है । आनन्दवर्धन ने ध्वन्यालोक के तृतीय उद्योत में "मुक्तकेषु हि प्रबन्धेष्विव रसबन्धाभिनिवेशिनः कवयो दृश्यन्ते, तथा ह्यमरुकस्य कवेर्मुक्तकाः श्रृंगाररसस्यन्दिनः प्रबन्धायमानाः प्रसिद्धा एव" ऐसा कहते हुए अमरुकशतक के अनेक श्लोकों का उदाहरण देते हैं । अतः उससे पहले ही अमरुकशतक रचना प्रसिद्ध हो गयी थी ऐसा तर्क किया जा सकता है । सुभाषितावलि के विश्वप्रख्यात नाडिंधमकुलतिलको विश्वकर्मा द्वितीयः पद्य से पता चलता है कि ये सुवर्णकार थे, तथापि इनके माता-पिता कौन थे, यह उल्लेख नहीं मिलता।

4.4.2 कर्तृत्व

इनकी एकमात्र रचना अमरुकशतकम् है । अमरुकशतकम् संस्कृत का एक गीतिकाव्य है । इसके रचयिता अमरु या अमरुक हैं । इसका रचना काल नवीं शती माना जाता है । इसमें कुल 100 श्लोक हैं जो अत्यन्त श्रृंगारपूर्ण एवं मनोरम हैं । यद्यपि यह नाम से शतक है परन्तु इसके पद्यों की संख्या एक सौ से कहीं अधिक है । सूक्तिसंग्रहों में अमरुक के नाम से निर्दिष्ट पद्यों को मिलाकर समस्त श्लोकों की संख्या 163 है । इस शतक की प्रसिद्धि का कुछ परिचय इसकी विपुल टीकाओं से लग सकता है । इसके ऊपर दस व्याख्याओं की रचना विभिन्न शताब्दियों में की गई जिनमें अर्जुन वर्मदेव (13वीं सदी का पूर्वार्ध) की 'रसिक संजीवनी' अपनी विद्वत्ता तथा मार्मिकता के लिए प्रसिद्ध है । आनन्दवर्धन की सम्मति में अमरुक के मुक्तक इतने सरस तथा भावपूर्ण हैं कि अल्पकाय होने पर भी वे प्रबन्धकाव्य की समता रखते हैं । संस्कृत के आलंकारिकों ने ध्वनिकाव्य के उदाहरण के लिए इसके बहुत से पद्य उद्धृत कर इनकी साहित्यिक सुषमा का परिचय दिया है।

4.4.3 शैली

अमरुक ने अपने काव्य में वैदर्भी रीति का प्रयोग किया है। वस्तुतः अमरुक शब्दकवि नहीं अपितु रसकवि हैं जिनका मुख्य लक्ष्य काव्य में रस का प्रचुर उन्मेष करना है । उनके काव्य ध्वनिकाव्य के अनुपम उदाहरण हैं । अमरुकशतक के पद्य श्रृंगार रस से परिपूर्ण हैं तथा प्रेम के जीते जागते चटकीले चित्रण में समर्थ हैं । प्रेमी और प्रेमिकाओं की विभिन्न अवस्थाओं में विद्यमान श्रृंगारी मनोवृत्तियों का अतीव सूक्ष्म और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण इन सरस श्लोकों की प्रधान विशिष्टता है । कहीं पति को परदेश जाने की तैयारी करते देखकर कामिनी की हृदयविह्वलता का चित्र है, तो कहीं पति के आगमन का समाचार सुनकर सुन्दरी की हर्ष से छलकती हुई आंखों और विकसित स्मित का रुचिक चित्रण है । इनकी प्रतिभा के समक्ष श्रृंगारिक उक्तियां दब जाती हैं । कीथ के शब्दों में – The love which Amaru is gay and highspirited, delighting in tiny tiffs and lovers quarrels but ending in smiles etc." हिन्दी के महाकवि बिहारी तथा पद्माकर ने अमरुक के अनेक पद्यों का सरस अनुवाद प्रस्तुत किया है ।

4.5 पण्डितराज जगन्नाथ

पण्डितराज जगन्नाथ उच्चकोटि के कवि, समालोचक, साहित्यशास्त्रकार तथा वैयाकरण थे । कवि के रूप में उनका स्थान उच्चकोटि के उत्कृष्ट कवियों में कालिदास के अनन्तर कुछ विद्वान् रखते हैं।

4.5.1 जीवन-वृत्त

पण्डितराज जगन्नाथ वेल्लनाटीय कुलोद्भव तैलंग ब्राह्मण, गोदावरी जिलांतर्गत मुंगुडु ग्राम के निवासी थे। उनके पिता का नाम 'पेरुभट्ट' (पेरभट्ट) और माता का नाम लक्ष्मी था। पेरुभट्ट परम विद्वान् थे। उन्होंने ज्ञानेंद्र भिक्षु से 'ब्रह्मविद्या', महेन्द्र से 'न्याय और वैशेषिक' खण्डदेव से 'पूर्वमीमांसा' और शेषवीरेश्वर से 'महाभाष्य' का अध्ययन किया था। वे अनेक विषयों के अति प्रौढ़ विद्वान् थे। पण्डितराज ने अपने पिता से ही अधिकांश शास्त्रों का अध्ययन किया था। 'शेषवीरेश्वर' जगन्नाथ के भी गुरू थे ।

एक किंवदंती के अनुसार जगन्नाथ, पहले जयपुर में एक विद्यालय के संस्थापक और अध्यापक थे। एक काजी को वाद-विवाद में परास्त करने के कीर्तिश्रवण से प्रभावित दिल्ली सम्राट् ने उन्हें बुलाकर अपना राजपण्डित बनाया। 'रसगंगाधर' के एक श्लोक में 'नूरदीन' के उल्लेख से यह समझा जाता है कि नूरुद्दीन मुहम्मद 'जहाँगीर' के शासन के अन्तिम वर्षों में (17वीं शती के द्वितीय दशक में) वे दिल्ली आए और शाहजहाँ के राज्यकाल तथा दाराशिकोह के वध तक (1659 ई.) वे दिल्लीवल्लभों के पाणिपल्लव की छाया में रहे। मुगल विद्वान् युवराज दाराशिकोह के साथ उनकी मैत्री घनिष्ठ थी पर उसकी हत्या के पश्चात् उनका उत्तर-जीवन मथुरा और काशी में हरिभजन करते हुए बीता। उनके ग्रन्थों में न मिलने पर भी उनके नाम से मिलने वाले पद्यों और किंवदंतियों के अनुसार पण्डितराज का 'लवंगी' नामक नवनीतकोमलांगी, यवनसुन्दरी के साथ प्रेम और शारीरिक-सम्बन्ध हो गया था जो एक दरबारी गायिका नर्तकी थी। उससे उनका विधिपूर्वक विवाह हुआ या नहीं, कब और कहाँ उसकी मृत्यु हुई – इस विषय में बहुत सी दन्तकथाएँ प्रचलित हैं। इसके अतिरिक्त पण्डितराज के सम्बन्ध में भी अनेक जनश्रुतियां पण्डितों में प्रचलित हैं । कहा जाता है कि 'यवन संसर्गदोष' के कारण काशी के पण्डितों, विशेषतः अप्पयदीक्षित द्वारा बहिष्कृत और तिरस्कृत होकर उन्होंने 'गंगालहरी' के श्लोकों का उच्चार करते हुए इच्छापूर्वक प्राण त्याग किया। कहीं-कहीं यह भी सुना जाता है कि यवनी और पण्डितराज – दोनों ने ही गंगा में डूबकर प्राण दे दिए थे। इस प्रकार की लोकप्रचलित दन्तकथाओं का कोई ऐतिहासिक-प्रमाण उपलब्ध नहीं है। किसी मुसलमान रमणी से उनका प्रणय सम्बन्ध रहा हो – यह सम्भव जान पड़ता है। 16वीं शती ई0 के अन्तिम चरण में सम्भवतः उनका जन्म हुआ था और 17वीं शती के तृतीय चरण में कदाचित् उनकी मृत्यु हुई। सार्वभौमश्री शाहजहाँ के प्रसाद से उनको 'पण्डितराज' की उपाधि (सार्वभौम श्री शाहजहाँ प्रसादाधिगतपण्डितराज पदवीविराजितेन) अधिगत हुई थी। कश्मीर के रायमुकुंद ने उन्हें 'आसफविलास' लिखने का आदेश दिया था। नवाब आसफ खाँ के (जो 'नूरजहाँ' के भाई और शाहजहाँ के मन्त्री थे) नाम पर उन्होंने उसका निर्माण किया। इससे जान पड़ता है कि शाहजहाँ और आसफ खाँ के साथ वे कश्मीर भी गए थे। इनका समय 16वीं शती के अन्तिम चरण में एवं मृत्यु 17वीं शदी के तृतीय चरण में मानी जाता है।

4.5.2 कर्तृत्व

पण्डितराज जगन्नाथ की निम्नलिखित रचनायें हैं–

स्तोत्र – अमृतलहरी (यमुनास्तोत्र), गंगालहरी (पीयूषलहरी), करुणालहरी (विष्णुलहरी), लक्ष्मीलहरी और सुधालहरी ।

प्रशस्तिकाव्य – आसफविलास, प्राणाभरण और जगदाभरण ।

शास्त्रीय रचनाएँ – रसगंगाधर (अपूर्ण साहित्यशास्त्रीय ग्रन्थ), चित्रमीमांसाखण्डन (अप्पय दीक्षित की 'चित्रमीमांसा' नामक अलंकारग्रन्थ की खण्डनात्मक आलोचना) (अपूर्ण),

काव्यप्रकाशटीका (मम्मट के 'काव्यप्रकाश' की टीका) और प्रौढ़मनोरमाकुचमर्दन (भट्टोजि दीक्षित के 'प्रौढ़मनोरमा' नामक व्याकरण के टीकाग्रन्थ का खण्डन) ।

इनके अतिरिक्त उनके गद्य ग्रन्थ 'यमुनावर्णन' का भी 'रसगंगाधर' से संकेत मिलता है। 'रसगंगाधर' नाम से सूचित होता है कि इस ग्रन्थ में पाँच 'आननों' (अध्यायों) की योजना रही होगी परन्तु दो हो 'आनन' मिलते हैं। 'चित्रमीमांसाखण्डन' भी अपूर्ण है। 'काव्यप्रकाशटीका' भी प्रकाशित होकर अब तक सामने नहीं आई।

सुभाषित – भामिनीविलास (पण्डितराज शतक) उनका परम प्रसिद्ध मुक्तक कविताओं का संकलन ग्रन्थ है। 'नागेश भट्ट' के अनुसार 'रसगंगाधर' के लक्षणों का उदाहरण देने के लिए पहले से ही इसकी रचना हुई थी। इसमें चार विलास हैं, प्रथम 'प्रस्तावित विलास' में अत्यन्त सुन्दर और ललित अन्योक्तियाँ हैं जिनमें जीवन के अनुभव और ज्ञान का सरस एवं भावमय प्रकाशन है। अन्य 'विलास' हैं – शृंगारविलास, करुणविलास और शान्तिविलास। सायास अलंकरणशैली का प्रभाव तथा चमत्कारसर्जना की प्रवृत्ति में अभिरुचि रखते हुए भी जगन्नाथ की उक्तियों में रस और भाव की मधुर योजना का समन्वय और सन्तुलन बराबर वर्तमान है। उनके मत से वाङ्मय में साहित्य, साहित्य में ध्वनि, ध्वनि में रस और रसों में शृंगार का स्थान क्रमशः उच्चतर है। पण्डितराज ने अपने पाण्डित्य और कवित्व के विषय में जो गर्वोक्तियाँ की हैं वे साधार हैं। वे सचमुच श्रेष्ठ कवि भी हैं और पण्डितराज भी।

4.5.3 शैली

पण्डितराज जगन्नाथ की विचार शक्ति एवं कल्पना अत्यन्त मौलिक थी। शास्त्र पर उनका आधिकार सर्वोपरि था। उनका वैदुष्य प्रगाढ़ और पाण्डित्य गम्भीर था। अपने ग्रन्थों के लिये उन्होनें भाषा-शैली दोनों नव्य-न्याय परम्परा के अनुसार लिये हैं। यह शैली सामान्य पाठक के लिये दुरूह ही नहीं बल्कि भयप्रद भी लगती है। कुछ विद्वान् इनके बारे में लिखते हैं कि जगन्नाथ की शैली पाण्डित्यपूर्ण है। अपनी जटिल भाषा, अतिसूक्ष्म विचार एवं प्राचीन लेखकों की निर्मम आलोचना के कारण विद्यार्थियों के लिये भयप्रद है। इनकी कृति समस्याओं के पुनर्विचार पर तीव्र और स्वतन्त्र शास्त्रार्थ एवं पूर्वाग्रहविमुक्त प्रहार करती है। पण्डितराज की एक विशिष्ट शैली है जिसमें वे पहले किसी वस्तु का लक्षण बताते हैं फिर उनका विवेचन करते हैं। तदन्तर अपने उदाहरण से स्पष्ट करते हैं फिर पूर्ववर्ती विद्वानों की आलोचना करते हैं। इनका गद्य ओजस्वी एव शैली गुण-दोष विवेचक है।

पण्डितराज जगन्नाथ उच्चकोटि के कवि, समालोचक तथा शास्त्रकार थे। कवि के रूप में उनका स्थान उच्चकोटि के उत्कृष्ट कवियों में कालिदास के अनन्तर कुछ विद्वान् रखते हैं। उन्होंने यद्यपि महाकाव्य की रचना नहीं की है, तथापि उनकी मुक्तक-कविताओं और स्तोत्रकाव्यों में उत्कर्षमय और उदात्त काव्यशैली का स्वरूप दिखाई देता है। उनकी कविता में प्रसादगुण के साथ-साथ ओजप्रधान, समासबहुला रीति भी दिखाई देती है। भावनाओं का ललितगुम्फन, भावचित्रों का मुग्धकारी अंकन, शब्दमाधुर्य की झंकार, अलंकारों का प्रसंग सहायक और सौन्दर्यबोधक विनियोग, अर्थ में भाव-प्रवणता और बोध-गरिमा तथा पदों के संग्रथन में लालित्य की सर्जना– उनके काव्य में प्रसंगानुसार प्रायः सर्वत्र मिलती है। रीतिकालीन अलंकरणप्रियता और ऊहात्मक कल्पना की उड़ान का भी उन पर प्रभाव था। गद्य और पद्य– दोनों की रचना में उनकी अन्योक्तियों में उत्कृष्ट अलंकरणशैली का प्रयोग मिलता है। कल्पनारंजित होने पर भी उनमें तथ्यमूलक मर्मस्पर्शिता है। उनकी सूक्तियों में जीवन के अनुभव की प्रतिध्वनि है। उनके स्तोत्रों में भक्तिभाव और श्रद्धा की दृढ़ आस्था से उत्पन्न भावगुरुता और तन्मयता मुखरित है। उनके शास्त्रीय विवेचन में शास्त्र के गाम्भीर्य और नूतन प्रतिभा की दृष्टि दिखाई पड़ती है। सूक्ष्म विश्लेषण, गम्भीर मनन-चिन्तन और प्रौढ़

पाण्डित्य के कारण उनका 'रसगंगाधर' अपूर्ण रहने पर भी साहित्यशास्त्र के उत्कृष्टतम ग्रन्थों में एक कहा जाता है। वे एक साथ कवि, साहित्यशास्त्रकार और वैयाकरण थे।

बोध प्रश्न 2

1. **निम्नलिखित प्रश्नों में सही विकल्प का चयन कीजिये–**

   i) अमरुकशतक का रचनाकाल माना जाता है–

   (क) 10वीं शताब्दी (ख) 9वीं शताब्दी

   (ग) 11वीं शताब्दी (घ) 12वीं शताब्दी

   ii) गीतगोविन्द के प्रणेता हैं–

   (क) जयदेव (ख) भर्तृहरि

   (ग) पण्डितराज जगन्नाथ (घ) अमरुक

   iii) पण्डितराज जगन्नाथ के पिता का नाम था–

   (क) बाणभट्ट (ख) पेरुभट्ट

   (ग) भूषणभट्ट (घ) श्रीहीर

2. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये –**

   i) अमरुशतक के श्लोकों में .... रस की प्रधानता है।

   ii) पण्डितराज जगन्नाथ .... ग्राम के निवासी थे।

   iii) रसगंगाधर के प्रणेता .... हैं।

   iv) अमरुक ने .... रीति का प्रयोग किया है।

अभ्यास प्रश्न 2

1. अमरुक कवि के जीवन-वृत्त के विषय में पाँच पंक्तियाँ लिखिये।
2. पण्डितराज जगन्नाथ की कृतियों का संक्षिप्त परिचय लिखिये।

4.6 सारांश

इस इकाई में आपने संस्कृत साहित्य के प्रमुख कवियों जैसे भर्तृहरि, जयदेव, अमरुक आदि के जीवन-वृत्त, कर्तृत्व तथा शैलीगत वैशिष्ट्य का अध्ययन किया। भर्तृहरि मुक्तक काव्य परम्परा के अग्रणी कवि हैं। उन्होंने अपने शतकत्रय के माध्यम से नीति, श्रृंगार और वैराग्य से सम्बन्धित श्लोकों की रचना की। उनके श्लोक भारतीय समाज के लिये आज भी उपयोगी हैं। जयदेव संस्कृत साहित्य के महाकवि हैं, ये ओडिशा के राजाओं के समकालीन थे। यह एक वैष्णव भक्त थे तथा सन्त के रूप में सम्मानित थे। इन्होंने गीतगोविन्द और रतिमञ्जरी की रचना की। गीतगोविन्द एक गीतिकाव्य है जिसके बारह सर्गों में श्रीकृष्ण की गोपिकाओं के साथ रासलीला, राधा-विषाद-वर्णन, कृष्ण के लिये व्याकुलता, उपालम्भ वचन, कृष्ण की राधा के लिये उत्कण्ठा आदि विषय वर्णित हैं। अमरु या अमरुक संस्कृत साहित्य के महान् कवियों में से एक हैं। वह अपनी एकमात्र कृति अमरुकशतक के माध्यम से सहृदयों के बीच प्रसिद्ध हुये। पण्डितराज जगन्नाथ उच्चकोटि के कवि, समालोचक, साहित्यशास्त्रकार तथा वैयाकरण थे। कुछ विद्वान् पण्डितराज जगन्नाथ का स्थान उच्चकोटि के उत्कृष्ट कवियों में कालिदास के अनन्तर रखते हैं। अमृतलहरी, गंगालहरी, सुधालहरी, आसफविलास आदि इनकी प्रसिद्ध रचनायें हैं।

4.7 शब्दावली

अग्रज	—	बड़ा भाई
सौष्ठव	—	सुन्दरता, सुगढ़ता
मनोवृत्ति	—	मन की स्वाभाविक स्थिति
एकीकृत	—	मिलाकर एक रूप किया हुआ
हृदयग्राही	—	रुचिकर, अभीष्ट
चित्त	—	मन
साम्य	—	समानता
दुष्कर	—	कठिन
चेष्टा	—	कोशिश, प्रयत्न
अनुशीलन	—	सतत तथा गम्भीर अभ्यास, चिन्तन-मनन
कीर्ति	—	यश

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. द्विवेदी कपिल देव, संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, ग्रन्थ गंगा ।
2. गोयल, प्रीतिप्रभा संस्कृत साहित्य का इतिहास (लौकिक खण्ड), 2016 ।
3. बलदेव, उपाध्याय संस्कृत साहित्य का इतिहास, शारदा मन्दिर, काशी, 1958 ।

4.9 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. (i) सत्य (ii) असत्य (iii) सत्य (iv) असत्य (v) सत्य
2. (i) पिंगला (ii) भर्तृहरि (iii) शार्दूलविक्रीडित (iv) जयदेव (v) पद्मावती

बोध प्रश्न 2

1 (i) (ख) नवीं शताब्दी (ii) (क) जयदेव (iii) (ख) पेरुभट्ट

2 (i) शृंगार (ii) मुगुंड (iii) पण्डितराज जगन्नाथ (iv) वैदर्भी

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।